फरवरी 2021

दादावाणी

Retail Price ₹ 15

सामने वाला आपको गाली दे
और मारे फिर भी, 'वह शुद्ध ही है',
ऐसा भाव नहीं छोड़ना चाहिए।

सत्संग और सत्संग से जुड़ी जानकारी के लिए डिजिटल माध्यम

Dadabhagwan App

इस पर परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी मिलेगी पुस्तकों और मैगेज़ीन (पत्रिकाएँ) के रूप में तथा मिलेंगे पूज्य नीरू माँ और पूज्य दीपक भाई के विभिन्न सत्संग। इसके अलावा पढ़ें व देखें आपके फोन और टैबलेट पर पुस्तकें, मैगेज़ीन, फोटो गैलेरी, ऑडियो, वीडियो आदि।

Available on |

Akonnect App

इस ऐप के माध्यम से आप पूज्य दीपक भाई के सत्संग कार्यक्रमों और अन्य सत्संग वीडियो, स्थानीय सत्संग केन्द्रों के अपडेट, आगामी कार्यक्रमों की जानकारी, एनर्जाइज़र, वीडियो आदि के बारे में नए-नए अपडेट प्राप्त कर सकेंगे।

Youth dadabhagwan.org

युवाओं के लिए वेबसाइट, इस पर मिलेंगे ऐसे लेख, पत्रिकाएँ, अनुभव आदि जिनमें आजकल के युवा वर्ग की समस्याओं के समाधान प्राप्त होंगे।

Kids. dadabhagwan.org

इस पर बच्चों को मिलेगी पॉज़िटिव दृष्टि, नैतिक मूल्यों पर आधारित कहानियाँ, खेल, मैगेज़ीन, पुस्तकें और ऐसे अन्य माध्यम।

You Tube

youtube.com/
dadabhagwanfoundation

facebook.com/
DadabhagwanFoundation

Dadabhagwan.tv

Dadabhagwan.FM

24 x 7 देखें/सुनें

ऑडियो बुक्स ● सत्संग ● जीवंत प्रसारण ● एनर्जाइज़र
वीडियो ● सामायिक ● इवेन्ट हाइलाइट्स ● रिंगटोन

और भी बहुत कुछ..

पूज्य नीरू माँ/पूज्य दीपक भाई के सत्संग की डीवीडी, भक्ति पदों, आरतियों, प्रार्थनाओं की ऑडियो सीडी और परम पूज्य दादा भगवान की ज्ञानवाणी पुस्तकों, मैगेज़ीन, MP3 के रूप में। इसके अलावा आप यह सब पेन ड्राइव व हार्ड ड्राइव में भी प्राप्त कर सकते हैं। त्रिमंदिर अडालज - फोन : 9924343805, 9328661166/77
और satsang.dadabhagwan.org संपर्क करें।

वर्ष : 16 अंक : 4
अखंड क्रमांक : 184
फरवरी 2021
पृष्ठ - 28

Editor : Dimple Mehta
© 2021
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Offset
B-99, GIDC, Sector-25,
Gandhinagar – 382025.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
15 साल
भारत : 1500 रुपये
यू.एस.ए. : 150 डॉलर
यू.के. : 120 पाउन्ड
वार्षिक
भारत : 150 रुपये
यू.एस.ए. : 15 डॉलर
यू.के. : 12 पाउन्ड
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से
संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

शुद्धात्मा के लक्ष सहित हो व्यवहार

संपादकीय

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) ने व्यवहार और निश्चय के दोनों पंखों को समानांतर करके मोक्षमार्ग पर विहार किया है और लाखों को करवाया है। आत्मज्ञान और व्यवहार ज्ञान के शिखर की बातें समझाकर संसार में जाग्रत कर दिया है। ज्ञानविधि के प्रयोग द्वारा मुमुक्षुओं की रोंग बिलीफ फ्रेक्चर होकर राइट बिलीफ बैठ जाती है कि, 'मैं चंदू नहीं और मैं शुद्धात्मा हूँ।' चंदू अलग और शुद्धात्मा अलग, यह जो बात हमें समझ में आती है, यह थ्योरीटिकल है, परंतु इसके साथ ही ज्ञान की प्रैक्टिकल सेटिंग करके संसार का हल लाना भी अनिवार्य है।

व्यवहार में जब तक हमारे द्वारा किसी को कुछ भी दुःख होता है, किसी के दोष या नेगेटिव दिखाई देते हैं, कषाय होते हैं, तब तक महात्माओं को जाग्रत रहने की ज़रूरत है। क्योंकि डिस्चार्ज कषाय अभी खाली नहीं हुए हैं, उपशम है। इस प्रकार के डिस्चार्ज कषायों के विस्फोट के समय होने वाली घटनाओं में किस प्रकार से वीतराग रहा जा सकता है, उसकी सुंदर, सरल और आसानी से समझ में आ जाएँ, ऐसे सटीक उदाहरणों सहित ज्ञान यहाँ पर प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत अंक में, दादाजी के जीवन व्यवहार की घटनाओं द्वारा यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार से चंदू के रोजमर्रा के जीवन व्यवहार में शुद्धात्मा का *लक्ष* (जागृति) रखकर जागृति रखनी है ताकि महात्माओं को समझ में आए कि शुद्धात्मा का अनुभव किस प्रकार से करना है। जैसे कि चंदू को कोई गाली दे तब, अपमान करे तब, ऑफिस में चंदू किसी को डाँटे तब, कर्ता पद की भ्रांति के समय, दोषित दृष्टि के समय सामने वाले को निर्दोष देख सकें, रियल में शुद्धात्मा देखें, कर्ता व्यवस्थित है इसलिए शुद्धात्मा अकर्ता है, इस प्रकार की जागृति सेट करेंगे तो हल आएगा।

दूसरों के दोष देखने से, दोषित दृष्टि की वजह से संसार खड़ा है और शुद्ध दृष्टि से संसार का अंत आता है। दादाश्री बताते हैं कि, 'शुद्धात्मा पद का अनुभव होने के बाद मुझे आप सभी के साथ कोई जुदाई नहीं लगती, अभेदता ही लगती है। क्योंकि हम निरंतर आत्मरूप में रहकर, जीवमात्र को शुद्धात्मा रूप से देखते हैं। अब मुझे, मुझ में और आप में कोई भेद नहीं लगता। ऐसी अभेद दृष्टि विकसित होती है और इस तरह से अभेद होने के लिए ही यह विज्ञान है।'

दादाश्री बहुत ही करुणा से कहते हैं कि, ''जहाँ पाँच आज्ञा का पालन होता है वहाँ हमेशा दादा का रक्षण रहेगा। हमारी एक ही भावना है कि, 'हमारी आज्ञा महात्माओं के सिर आँखों पर और आपके संसार का पूरा बोझ दादा पर रखो!' दादा आपका रियल और रिलेटिव का सारा संभाल लेंगे।'' 'मैं शुद्धात्मा हूँ', यह मोक्ष का प्रवेश द्वार कहलाता है। इस पद से मोक्षमार्ग में प्रवेश किया है। अब, जब महात्मा पाँच आज्ञा के पुरुषार्थ द्वारा अनुभव की श्रेणी में आगे बढ़ेंगे, तब यहीं पर निरालंब आत्मा का अनुभव होगा।

- **जय सच्चिदानंद**

शुद्धात्मा के लक्ष सहित हो व्यवहार

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

दिव्यचक्षु देकर बना दिया शुद्धात्मा

श्री कृष्ण भगवान ने महाभारत के युद्ध के समय अर्जुन को दिव्यचक्षु दिए थे। पर केवल पाँच ही मिनट के लिए, उसका वैराग्य टालने के लिए। फिर वापस ले लिए थे। हम आपको परमानेन्ट दिव्यचक्षु देते हैं। फिर जहाँ देखेंगे वहाँ भगवान दिखेंगे। हम में दिखेंगे, इनमें दिखेंगे, पेड़ में दिखेंगे और गधे में भी दिखेंगे। प्रत्येक जीव में भगवान दिखेंगे, सब जगह 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' ही दिखाई देंगे, फिर है कोई झंझट?

तीन सौ साल पहले हुए, जैनों के सब से बड़े आचार्य महाराज आनंदघन जी क्या कह गए हैं, 'इस काल में दिव्यचक्षु का, निश्चय से वियोग हो गया है।' इसलिए सभी ने दरवाजे बंद कर लिए। यह तो कुदरती ही गज़ब का ज्ञान प्रकट हो गया है, नैचुरल एडजस्टमेन्ट है। जिससे घंटे भर में ही दिव्यचक्षु पाना सुलभ हो गया है।

यह ज्ञान तो ठेठ मोक्ष में पहुँचने तक साथ ही रहेगा। यहाँ हमारी हाज़िरी में अंत:करण की शुद्धि होती रहती है। उसमें दु:ख होते हों, वे बंद हो जाते हैं, उपरांत शुद्धि होती है। उस शुद्धि से तो सच्चा आनंद उत्पन्न होता है! सदा की शांति होती है!

देह के साथ-साथ अंत:करण की भेंट देकर यदि एक ही घंटा ज्ञानी पुरुष के साथ बैठे तो संसार का मालिक बन सकता है। उस एक घंटे में तो हम आपके सभी पापों को भस्मीभूत करके, आपके हाथों में दिव्यचक्षु दे देते हैं, शुद्धात्मा बना देते हैं। फिर आप जहाँ जाना चाहें, वहाँ जाइए न!

नहीं हैं शुद्धात्मा में राग-द्वेष

अब आप चंदूभाई हो या शुद्धात्मा हो?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा।

दादाश्री : तो शुद्धात्मा में राग या द्वेष का एक भी परमाणु नहीं बचा है। यानी कि आपको संपूर्ण शुद्धात्मा बना दिया है, पद दिया है तो फिर ऐसा क्यों कर रहे हो? आपको हंड्रेड परसेन्ट (शुद्धात्मा) पद पर बिठा दिया है न, जहाँ पर किंचित्मात्र भी राग-द्वेष, क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हैं। आपको समझ में आ गई न यह अंटी? यह तो आपकी जो पहले की आदत है न, वह जाती नहीं है। आदत में ऐसा है कि, 'यह मुझे ही हो गया।' यह तो गारन्टेड है। यह कोई ऐसी-वैसी चीज़ नहीं है। यह गारन्टेड मोक्ष दिया हुआ है। हाथ में मोक्ष दिया हुआ है लेकिन जिसे जितना भोगना आए उतना उसके बाप का!

'शुद्धात्मा' तो शुद्धात्मा ही है, वीतराग है लेकिन प्रकृति राग-द्वेष वाली है, उसे वीतराग बनना है। प्रकृति को 'वीतराग' बनने के लिए शुद्धात्मा का ज्ञान होना चाहिए।

अभी इस ज्ञान के बाद जो राग-द्वेष होते हुए दिखाई देते हैं न, वह आकर्षण और विकर्षण है। वह *पुद्गल* (जो पूरण और गलन होता

है) का गुण है लेकिन 'मुझे ऐसा हो रहा है' कहा, वही राग है। और फिर ये राग-द्वेष खुद का स्वभाव नहीं है। आत्मा का स्वभाव राग-द्वेष वाला है ही नहीं। स्वभाव से आत्मा वीतराग है। ये राग-द्वेष तो *पुद्गल* का स्वभाव है। अर्थात् आकर्षण और विकर्षण *पुद्गल* का स्वभाव है। *पुद्गल* के इस स्वभाव को खुद का स्वभाव मानकर खुद ऐसा कहता है कि मुझे राग-द्वेष हो रहे हैं। जब तक यह रोंग बिलीफ है कि 'मैं *पुद्गल* हूँ, यही मैं हूँ, चंदूभाई ही हूँ' तब तक ऐसा हाल रहेगा और जब 'मैं चंदूभाई हूँ' छूट जाएगा और 'मैं शुद्धात्मा हूँ' हो जाएगा, तब ऐसा हाल नहीं रहेगा।

जहाँ राग-द्वेष हैं, वहाँ आत्मा नहीं है। जहाँ आत्मा है, वहाँ राग-द्वेष नहीं हैं। राग-द्वेष जितने कम, आत्मा उतना ही प्रकट हुआ है! राग-द्वेष खत्म तो संपूर्ण आत्मा! यानी कि वीतराग पद दे दिया है। क्या यह कोई ऐसा-वैसा पद है? यह एक्ज़ेक्ट है। यह विचार करने योग्य नहीं है और अगर चिंता शुरू हो जाए तो समझना कि यह वीतरागता नहीं है। अब आपने इस तरफ का रुख किया है न, तो अब आपको उसके पुष्टि के कारण मिल आएँगे क्योंकि आप खुद शुद्धात्मा हो। यह बाकी का जो कुछ भी बचा है न, उस ज्ञेय और दृश्य को आप सामने लाओ तो उससे लेना-देना नहीं है। ज्ञेय तो ऐसा भी हो सकता है और वैसा भी हो सकता है। ज्ञेय तो, अंदर मन में क्या कहता है, 'आत्महत्या करनी पड़ेगी' लेकिन किसे? उसे न! हमें क्या? हम तो जानने वाले हैं। अर्थात् यह पद कुछ अलग ही प्रकार का है, वीतराग पद है।

शुद्धात्मा किस प्रकार से देखें?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा को किस प्रकार देख सकते हैं?

दादाश्री : ऐसा है न कि शुद्धात्मा देखना, उसका अर्थ क्या है? यह सोने की डिबिया है, उसके अंदर रखा हुआ हीरा एक बार खोलकर मैं दिखा देता हूँ, फिर डिब्बी बंद कर देता हूँ, उससे हीरा चला नहीं जाता। आपके *लक्ष* (जागृति) में रहता है कि इसमें हीरा ही है, क्योंकि आपने उसे देखा था। अरे! आपकी बुद्धि ने उस दिन 'एक्सेप्ट' किया था। हमने 'ज्ञान' दिया, उस घड़ी आपके मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार सभी ने 'एक्सेप्ट' किया। उसके बाद शंका खड़ी ही नहीं होती।

इस शरीर में दो विभाग हैं, एक चंचल विभाग और दूसरा अचंचल विभाग। अचल जो है वह आत्मा है। मूल आत्मा तो शुद्धात्मा है, वह एक क्षण के लिए भी अशुद्ध हुआ ही नहीं।

आत्मा शुद्ध चेतन है। यह जो दिखाई देता है, वह मिश्रचेतन है। और जो शुद्ध चेतन है, वह शुद्धात्मा है और वही परमात्मा है।

आप अपने व्यापार में जितनी निपुणता रखते हैं, उतनी यदि आत्मा में हो तो काम की! हम बिल्कुल ही मिलावट वाला सोना लेकर सुनार के पास जाएँ, तब भी वह हमसे नाराज नहीं होता। वह तो केवल सोने को ही देखता है। लोगों का तो मिलावट करने का ही स्वभाव है, फिर भी, सुनार तो सोने को ही देखता है। ये डॉक्टर तो चिढ़ते हैं कि भाई, शरीर का क्यों ख़याल नहीं रखते? पर सुनार नहीं चिढ़ता। ज्ञानी पुरुष भी सुनार की तरह आत्मा ही देखते हैं, बाहर का माल नहीं देखते। सोने की अवस्थाएँ बदलती रहती हैं: मिलावट होती है, पिघलाएँ तो द्रव बन जाता है, पाउडर हो जाता है और उसमें से फिर शुद्ध सोना हो जाता है। इस तरह अवस्थाएँ भले बदलती रहें परंतु सोना आखिर सोना ही रहता है! सुनार का सोने में जैसा *लक्ष* रहता है,

वैसे ही आपको आत्मा का *लक्ष* रहे, तब काम होगा। सुनार सोने में ही *लक्ष* रखता है। बाहर से चाहे कैसा भी मिलावटी दिखाई दे पर *लक्ष* तो सौ प्रतिशत के सोने में ही होता है, वैसे ही ज्ञानी पुरुष चेतन में ही *लक्ष* रखते हैं।

शुद्धात्मा बनकर रहो व्यवहार में

अगर कोई व्यक्ति जेल में से छूटकर प्रधानमंत्री बन जाए तो प्रधानमंत्री बनने के बाद वह दिन-रात यह नहीं भूलता कि, 'मैं प्रधानमंत्री हूँ', नहीं भूलता न? वह नहीं भूलता इसलिए वह काम में भी नहीं चूकता। कोई अगर प्रश्न पूछे न, तो वह ऐसा समझकर ही जवाब देता है कि, 'मैं प्रधानमंत्री हूँ।' इसी प्रकार हम शुद्धात्मा बन गए हैं न, तो हमें भी, 'मैं शुद्धात्मा हूँ,' ऐसा समझकर ही जवाब देना है। जिस रूप बन चुके हैं, उस रूप का है यह। समझ जाओ। बाहर कर्म के उदय ज़ोर मारें तो वह अलग बात है। वे तो प्रधानमंत्री के भी ज़ोर मारेंगे। कर्म के उदय से कोई पत्थर मारता है, कोई गालियाँ देता है। वैसे सभी कर्म के उदय तो उनके भी हैं न, लेकिन जिस प्रकार वे प्रधानमंत्री के रूप से अपना फर्ज़ निभाते हैं, उसी प्रकार से हमें भी शुद्धात्मा का फर्ज़ निभाना पड़ेगा। इससे वह यह नहीं भूल जाता कि, 'मैं चंदूभाई हूँ।' ऐसा भूलने से चलेगा क्या? सबकुछ *लक्ष* में ही रहता है न?

आत्म-अनुभव के बाद शुद्धात्मा का भान

प्रश्नकर्ता : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा समझ में आया है लेकिन उसका निरंतर भान नहीं रहता है।

दादाश्री : भान क्या चीज़ है वह आपको समझाता हूँ कि यदि कोई सिगरेट पी रहा हो, तब उसका बेटा उसमें इस तरह हाथ लगाने जाएगा। अब इस बच्चे का यह रोग कब जाएगा? कोई सिगरेट पी रहा हो तब वह इस तरह उसे छूने की कोशिश करता है तो फिर एक दिन इस तरह से उसे हाथ पकड़कर ज़रा सीगरेट छुआ देते हैं, कुछ देर रहने दे तो वह खूब जल जाता है। इसके बाद ज़िंदगी भर वह इस अनुभव को नहीं भूलेगा। जलती हुई सिगरेट का ज़रा लाल दिखाई दिया कि भागेगा, लाल दिखाई दिया कि भागेगा, उसे कहते हैं अनुभव। उसी तरह से हमने आपको आत्मा का अनुभव करवा दिया है। तब जाकर आपको शुद्धात्मा रहता है, क्या यों ही रहता होगा?

हम तो जलाए बगैर करवा देते हैं आत्मा का अनुभव! इस दुनिया में चीज़ों का अनुभव भी जलकर करना पड़ता है लेकिन यह आत्मा का अनुभव तो परमानंद है! इसमें जलना-करना नहीं है। हमारे साथ बैठोगे तभी से ही आनंद उत्पन्न होने लगेगा। शुद्धात्मा का निरंतर भान रहता ही है। इससे ज़्यादा और क्या चाहिए?

यह ज्ञान आपको निरंतर हाज़िर रहता है। आप कोर्ट में जाओ तब भी आपको यह भान रहा करता है कि, 'मैं शुद्धात्मा हूँ।' पाप भस्मीभूत हुए बिना कभी भी भान नहीं रह सकता। अगर यों ही आपको एक शब्द बताया हो तो अगले दिन याद नहीं रहता तो यह याद नहीं रखना है।

शुद्धात्मा की सीट पर नहीं होता असर

प्रश्नकर्ता : 'आप शुद्धात्मा हो ही, लेकिन उसका भान रहना चाहिए।' व्यवहार में यह किस प्रकार है दादा, इसे समझाइए।

दादाश्री : खुद शुद्ध ही है। चंदूभाई के हाथ से कोई जीव मर गया तो भी खुद की शुद्धता नहीं चूके, उसे ज्ञान कहते हैं। खुद को भ्रांति उत्पन्न नहीं होती कि, 'इसे मैंने मारा।' क्योंकि मारने वाले आप हो ही नहीं। शुद्ध स्वरूप हो आप। आप कर्ता-भोक्ता हो ही नहीं। जो कर्ता-

भोक्ता है, यह उसका गुनाह है। यानी आपको तो चंदूभाई क्या करते हैं, वह देखते रहना है। यदि उसके हाथ से कोई जीव मर जाए तो आप ज़रा सलाह देना कि, 'चंदूभाई, ज़रा संभलकर चलो तो अच्छा।' यदि साइन्टिफिक तरह से ज्ञान रहता हो तो मौन रहने में भी हर्ज नहीं है लेकिन लोगों को साइन्टिफिक तरह से नहीं रहता।

'शुद्ध ही है', वह भाव छूटे नहीं। और सामने वाला आपको गाली दे रहा हो और मार रहा हो तो भी वह 'शुद्ध ही है', ऐसा भाव छोड़ना नहीं चाहिए।

पूरा जगत् प्रतिपक्षी भाव से कर्म बांधता है। स्वरूपज्ञानी को प्रतिपक्षी भाव नहीं होते। असर होता है, परंतु कर्म नहीं बंधते! और जब पराक्रम होने लगे, तब तो असर भी नहीं होता। असर में क्या होता है कि कोई गाली दे तो 'इसने मुझे ऐसा कहा ही क्यों?' ऐसा होता है। परंतु पराक्रम क्या कहता है, कि 'तेरी भूल होगी इसीलिए वह कहता है और नुकसान इसलिए हुआ क्योंकि व्यापार करना नहीं आता।' इस तरह स्वयं खुद के साथ ही बातचीत करने पर खुद की पहचान होती है, परिचय होता है, 'खुद की' गद्दी पर, शुद्धात्मा की गद्दी पर बैठने का परिचय होता है। यह तो गद्दी पर से तुरंत ही उठ जाता है! वह अनादिकाल का परिचय है इसलिए और भुगतना अभी बाकी है इसलिए!

होम में रहकर सुपरफ्लुअस व्यवहार

इस (संसार) में सुख नहीं है, वह समझना तो पड़ेगा न? भाई अपमान करें, मेमसाहब भी अपमान करें, बच्चे अपमान करें! यह तो सारा नाटकीय व्यवहार है, बाकी इनमें से कोई साथ में थोड़े ही आने वाला है?

आप खुद शुद्धात्मा हो और यह पूरा व्यवहार नाटकीय है यानी कि 'सुपरफ्लुअस' रहना है। खुद 'होम डिपार्टमेन्ट' में रहना है और 'फॉरिन' में 'सुपरफ्लुअस' रहना है। 'सुपरफ्लुअस' यानी तन्मयाकार वृत्ति नहीं, ड्रामेटिक, वह। सिर्फ यह 'ड्रामा' ही करना है। 'ड्रामा' में नुकसान हुआ तब भी हँसना और नफा हुआ तब भी हँसना। 'ड्रामा' में दिखावा भी करना पड़ता है, नुकसान हुआ हो तो उसका दिखावा करना पड़ता है। मुँह पर बोलते भी हैं कि बहुत नुकसान हुआ, लेकिन भीतर तन्मयाकार नहीं हों। हमें 'दूर का सलाम' रखना है। कई लोग नहीं कहते कि भाई, मुझे तो इसके साथ 'दूर के सलाम' जैसा संबंध है। उसी तरह सारे जगत् के साथ रहना है। जिसे पूरे जगत् के साथ 'दूर का सलाम' करना आ गया, वह ज्ञानी बन गया। इस देह के साथ भी 'दूर का सलाम!' हम निरंतर सभी के साथ 'दूर का सलाम' रखते हैं, फिर भी सब कहते हैं कि, 'आप हम पर बहुत अच्छा भाव रखते हैं।' मैं व्यवहार सभी करता हूँ लेकिन आत्मा में रहकर।

शुद्धात्मा के भान सहित व्यवहार

प्रश्नकर्ता : व्यवहार की बात करना और आत्मा में रहना, ये दोनों एक साथ कैसे हो सकता है?

दादाश्री : वह स्वभाविक रूप से रहता है हमें तो।

प्रश्नकर्ता : वह चीज़ हम कैसे सीखें?

दादाश्री : 'मैं नहीं बोल रहा हूँ', यदि ऐसा भान रहे तो फिर स्वाभाविक रूप से रहेगा। 'मैं कर्ता नहीं हूँ', ऐसा भान रहे तो फिर वही आ गया न! स्वादिष्ट लग रहा है तो क्या तू खा जाता होगा इसमें? आत्मा खाता है?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : खाने वाला ही खाता है, देखने वाला देखता रहता है। आपको अपने इस विज्ञान में परेशानी होती है किसी तरह की? खाने वाला ही खाता है न? आप तो कभी खाते नहीं हो न?

प्रश्नकर्ता : समझ में तो वैसा ही है, लेकिन उस तरह से रह नहीं पाते।

दादाश्री : मालपुए आप खा गए थे? खीर?

प्रश्नकर्ता : वास्तव में मैंने नहीं खाया था। खाया सब चंदूभाई ने! खाते समय याद नहीं रहा।

दादाश्री : याद नहीं रहा लेकिन इसका मतलब यह थोड़े ही है कि आत्मा खा गया? किसी भी स्थिति में आत्मा अब चंदूभाई नहीं बन सकता। आपने इतना बिगाड़ दिया फिर भी नहीं बना अभी तक। अभी भी आप यदि कहे अनुसार परिवर्तन करो तो कल से राह पर आ जाएगा। क्योंकि आपका राह पर ही है, समभाव से *निकाल* (निपटारा) करते हो, व्यवस्थित समझ में आ गया है। भूलचूक हो जाए तो सुधर सकती है।

प्रश्नकर्ता : इस दृष्टि की प्राप्ति के बाद भले ही कैसा भी वर्तन होता हो फिर भी यदि दृष्टि में जुदापन की जागृति रहे, तो क्या उससे बंधन है?

दादाश्री : वर्तन किसका है? दृष्टि किसकी है? यह तो, 'मुझे लगा, मुझे लगा' कहने से चिपक जाता है। नहीं तो भाई, वस्तु अलग हो चुकी है। अब क्या चिपकेगा तुझे यहाँ?! जिसने आत्मा को निर्लेप जाना, निर्लेप अनुभव किया फिर उसे क्या चिपकेगा? और अगर चिपका तो फिर तुरंत प्रज्ञा आपको सचेत करेगी! आज्ञा पालन करते हैं इसलिए (कर्म) बंधन नहीं होगा और बंधन नहीं हुआ यानी कि अंदर आत्मा जुदा हो ही गया है।

कर्ताभाव में रहने से कर्म बंधन

प्रश्नकर्ता : अगर किसी ने शुद्धात्मा का ज्ञान लिया हो और उसे कोई थप्पड़ मारे और वह वापस थप्पड़ मार दे, तो फिर उस पर ज्ञान का असर नहीं हुआ, ऐसा समझें या उसका शुद्धात्मापन कच्चा है, ऐसा समझें?

दादाश्री : शुद्धात्मा का ज्ञान कच्चा रह गया, ऐसा नहीं कह सकते।

प्रश्नकर्ता : तो फिर उसने किसलिए थप्पड़ मारा वापस?

दादाश्री : जब थप्पड़ मारा न, उस समय 'वह' जुदा ही होता है। और 'उसके' मन में पछतावा होता है कि, 'ऐसा नहीं होना चाहिए, ऐसा क्यों हो रहा है?' यह 'ज्ञान' ऐसा है कि अपनी खुद की एक भी भूल हुई हो तो तुरंत ही पता चल जाता है और भूल हुई ऐसा जब पता चले न, तब पछतावा होता ही है।

और यह जो हुआ, उसमें ज्ञान का और उसका कोई लेना-देना नहीं है। ये सभी उसके 'डिस्चार्ज' भाव हैं।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा बन चुका हो, यह ज्ञान लिया हुआ हो और 'परफेक्ट' हो, तो वह हमें उसके आचरण से कैसे पता चलेगा?

दादाश्री : उसमें 'इगोइज़म' नहीं होता, कर्तापद खत्म हो चुका होता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा मानो न, कि 'मैं नहीं कर रहा हूँ' ऐसा मुझे बरतता है, तो फिर इनको मैं थप्पड़ मारूँ और मैं कहूँ कि 'मैं नहीं मार रहा, शरीर मार रहा है। आत्मा ने नहीं मारा' तो?

दादाश्री : ऐसा कह ही नहीं सकते न! 'शरीर ने मारा है' ऐसा नहीं बोल सकते। वह

तो जोखिम है। 'शरीर ने मारा है, आत्मा ने नहीं मारा' ऐसा कहे, ऐसा बचाव करे तो उसे हम कहेंगे, 'खड़े रहो, शरीर में मुझे सुई चुभोने दो', तो 'शरीर ने मारा है' ऐसा नहीं बोलेगा।

ऐसा है, मारना तो एक प्रकार का 'डिस्चार्ज' भाव है। इस 'ज्ञान' के बाद उसका 'खुद' का चार्ज करना बंद हो जाता है, फिर 'डिस्चार्ज' बाकी रहता है। उसके लिए जोखिमदर नहीं रहता। 'कर्तापन मिटे तो छूटे कर्म।' कर्तापन उसका छूट गया है।

प्रश्नकर्ता : 'हम कर रहे हैं', वह भाव चला जाना चाहिए।

दादाश्री : बस, इतना भाव चला गया तो काम पूरा हो गया।

जो डाँटता है, वह 'मैं' नहीं

प्रश्नकर्ता : मुझे ऑफिस में काम करते हुए किसी को डाँटना पड़ता है, कुछ कहना पड़ता है, लेकिन फिर मुझे बहुत दु:ख होता है कि किसी को ऐसा कहने का निमित्त मुझे क्यों बनना पड़ा।

दादाश्री : ऐसा है न, कि आप डाँटते ही नहीं हो न?! चंदूभाई डाँटते हैं या आप डाँटते हो?

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई डाँटते हैं।

दादाश्री : तो आपको ज़िम्मेदारी लेने की ज़रूरत नहीं है। आपको तो चंदूभाई से ऐसा कहना है कि, 'भाई, बहुत डाँटोगे तो आपकी क्या कीमत रहेगी? आपकी आबरू जाएगी!'

प्रश्नकर्ता : यों कई बार हम लोगों को कुदरत के सामने इतना लाचार होता हुआ देखते हैं कि उस समय ज्ञान या कोई भी चीज़ काम नहीं आती, तब वहाँ पर क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अब, आप शुद्धात्मा बन गए हो। शुद्धात्मा को लाचारी हो ही नहीं सकती न! 'आपको' चंदूभाई नहीं बन जाना चाहिए। 'आप' चंदूभाई बन जाओ, उसकी जवाबदेही आएगी। आपने तय किया है कि वास्तव में आप कौन हो? और चंदूभाई आपका रिलेटिव स्वरूप है। यानी कि आपको तो वह बनना ही नहीं है।

जहाँ अकर्ता पद, वहाँ संपूर्ण जागृति

प्रश्नकर्ता : आत्मा को जान लिया, ऐसा कब कहलाएगा? कर्तापन छूट जाए तब?

दादाश्री : 'मैं यह कर रहा हूँ' वह भान टूट जाए तब आत्मा जान लिया कहलाएगा। पूरा दिन (खुद की) भूलें दिखाता रहे, वह आत्मानुभव। 'मैं यह संसार चलाता हूँ।' वह भान नहीं है आपको?

प्रश्नकर्ता : वह तो अपने आप चलता है!

दादाश्री : वह तो जब अच्छा होता है, कोई तारीफ करे कि, 'अरे, इन्होंने यह कितना अच्छा किया!' तब कहता है, 'मैंने किया था।' और गलत हो जाए तब कहेगा, 'यह तो मेरे कर्मों के उदय ने घेर लिया है।' पूरा जगत् ऐसे बोलता है। कर्तापद किसी काल में छूटता नहीं। सब छूटता है पर कर्तापद नहीं छूटता। जब तक कर्तापद का भान नहीं टूटता, तब तक अहंकारी कहलाता है और अहंकार अर्थात् भ्रांति। संपूर्ण भ्रांति वाले को 'वहाँ' प्रवेश नहीं करने देते। कर्तापद का भान टूट जाना चाहिए या नहीं टूट जाना चाहिए? शुद्धात्मा बोलते ज़रूर हैं, पर उससे कुछ होता नहीं है। वह तो कर्तापद का भान टूटे और कर्ता कौन है, वह समझ में आए फिर काम आगे चलेगा। नहीं तो कैसे चलेगा? जब तक कर्तापद है, तब तक अध्यात्म की जागृति ही नहीं मानी जाती। कर्तापद छूटे बिना कोई बाप भी मोक्ष के दरवाज़े में घुसने दे, ऐसा नहीं है।

'मैं चंदूलाल हूँ' वह भ्रांति टूट जानी

चाहिए और कर्तापद छूट जाना चाहिए। फिर नाटकीय कर्तापद रहता है। 'ड्रामेटिक' कर्तापद यानी क्या? 'मैंने किया', ऐसा कहता है। जैसे भर्तृहरि राजा नाटक में बोलता है कि, 'मैं राजा हूँ।' पर साथ ही 'मैं लक्ष्मीचंद हूँ और घर जाकर खिचड़ी खानी है' वह भूल नहीं जाता। उसी तरह आप 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह भूल नहीं जाते। और 'यह मैंने किया' ऐसा बोलते हों, वह 'ड्रामेटिक' कहलाता है। कर्तापद का भान टूट जाना चाहिए। वर्ना लोग शुद्धात्मा तो गाते ही रहते हैं न? शास्त्रों में तो स्पष्ट लिखा ही है, उस तरह से वह शास्त्र गाता रहता है, पर उससे कुछ बदलेगा नहीं। वैसा तो अनंत जन्मों से गाया है।

'मैं शुद्धात्मा हूँ', ऐसा लगते ही छूटे कर्तापन

हम पूरे जगत् को, जीवमात्र को शुद्ध स्वरूप से ही देखते हैं। जैसे आप देखते हो वैसे ही हम भी देखते हैं और प्रकृति को उदय के रूप में निहारते हैं। एक को देखते हैं और एक को निहारते हैं और दोषित तो कोई है ही नहीं, निर्दोष है जगत्। लोगों को दोषित दिखता होगा? पत्नी दोषित दिखती है? सभी दोषित ही दिखते है न!

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न, कि 'एक को हम देखते हैं और एक को निहारते हैं', तो वह समझ में नहीं आया। निहारने में और देखने में क्या फर्क है?

दादाश्री : आत्मा से देखते हैं, हम दृश्य को द्रष्टा की तरह देखते हैं, आत्मा से आत्मा को देखते हैं और इस देह दृष्टि से उदय स्वरूप को निहारते हैं कि वह किसी को गाली दे रहा है तो वह उसका उदय स्वरूप है, इसमें आज उसका दोष नहीं हैं। उसका दोष तो, अंदर वह जो भाव कर रहा है, वही उसका दोष है। लेकिन अपने महात्मा तो भाव भी नहीं करते। कर्तापन छूट गया, इसलिए। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' इसलिए कर्तापन छूट गया है। वास्तव में आप शुद्धात्मा हो या वास्तव में चंदूभाई हो?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा हूँ।

दादाश्री : तो फिर कर्तापन छूट गया। 'मैं चंदूभाई हूँ' वही कर्तापन था। अतः कर्तापन छूट गया। अब आप में कर्तापन नहीं रहा, आपको कर्म नहीं बंधेंगे।

हम से अगर कोई कहे कि, 'आपकी पीठ पीछे ऐसा बोल रहे थे', तो मैं कहूँगा, 'बोलने दो भाई।' यह मेरा उदय स्वरूप है न, और उसका भी उदय स्वरूप है बेचारे का और उस उदय स्वरूप को हम निहारते हैं।

अच्छे-खराब सर्टिफिकेटों में समभाव

हमारा एक भतीजा है, वह भरुच टेक्सटाइल मिल का सेठ था। उसने कहा, 'चाचा, जैसे आप पहले थे, उससे तो अभी बिगड़ गए हैं। चाचा कितने अच्छे इंसान थे और यह धर्म के चक्कर में पड़ने से बिगड़ गए।' तब मैंने उसे क्या कहा? 'तू बड़ा आदमी है इसलिए तुझे इसमें कुछ समझ नहीं आएगा। मैं पहले से ऐसा ही था लेकिन तुझे पता नहीं चला। मैं तो जानता हूँ न कि मैं कैसा था! यह तो बहुत ही विषम इंसान है तेरा चाचा तो!' उसने कहा, 'लेकिन पहले ऐसे नहीं थे न?' मैंने कहा, 'नहीं, शुरू से ऐसा ही था लेकिन आपको पता नहीं था। मैं इसके साथ ही रहता हूँ न!' तब उसने कहा, 'ऐसे कैसे कह रहे हैं?' मैंने कहा, 'इसे शुरू से ही जानता हूँ। पहचानता हूँ तेरे चाचा को', ताकि फिर मुझे डिप्रेस (हताश) नहीं कर सके न! तो फिर क्या हम उसे नहीं पहचानते थे? पूरी तरह से पहचानते थे।

इस तरह से कहकर निबेड़ा ला देते हैं

लेकिन ऐसा नहीं कहते कि, 'हम ऐसे नहीं हैं।' शुरू से ऐसा है कह देते हैं ताकि वह समझे कि ये पहले ऐसे नहीं थे, फिर भी ऐसा कह रहे हैं! और उसका कोई अर्थ ही नहीं है। वह बात को उड़ा ही देगा। वह ऐसा मानता है कि मुझ में कुछ गलत है। 'तो भाई, तुझमें सही क्या है? यों ही गप्प, बिना समझे बोल रहा है!' 'आप ज़रा ऐसे हो गए हैं, आप ऐसे हो गए हैं। आप अब कुटुंब के प्रति प्रेम भाव नहीं रखते, शादियों में नहीं आते।' तो फिर मैं शादी में जाकर आता हूँ। 'हाँ, चाचा आए थे। चाचा बहुत अच्छे इंसान हैं!' तो भाई, तू वही का वही है, तेरे बजाय तो इस स्कूल के सर्टिफिकेट अच्छे! ज़िंदगी भर पास (उत्तीर्ण) है ऐसा ही दिखाते हैं। मैट्रिक पास लिखते हैं या नहीं लिखते? और आप तो घड़ी भर में अच्छे और घड़ी भर में बुरे! यानी यह जगत् तो इसी तरह चलता रहेगा लेकिन हम समभाव से *निकाल* कर देते हैं, बहुत अच्छी तरह।

जहाँ टेढ़ा कहते थे वहाँ समभाव

वह तो एक जगह हमारे गाँव में हमें सत्संग के लिए बुलाया था, तो वहाँ सत्संग कर रहे थे तब हमारे एक चचेरे भाई टेढ़ा-मेढ़ा बोलने लगे। उन्होंने बैठे-बैठे बोलना शुरू किया कि, 'ये बहुत बड़ी रकम दबाकर बैठे हैं, खूब दबाकर बैठे हैं इसलिए सत्संग हो रहा है आराम से।' क्या कहा?

प्रश्नकर्ता : खूब दबाकर बैठे हैं।

दादाश्री : मैं समझ गया कि यह इंसान चचेरेपन के गुण की वजह से ऐसा कह रहा है। उससे सहन नहीं हो पा रहा है। मैंने कहा, 'भाई, आपको क्या पता मैं क्या दबाकर बैठा हूँ? आपको क्या पता कि मेरे बैंक में क्या है?' तब उसने कहा, 'अरे! दबाए बगैर तो ऐसा कह ही नहीं सकते न, सत्संग होगा ही कैसे?' मैंने कहा, 'बैंक में जाकर पता लगा आओ।' लाख रुपए आने से पहले कोई न कोई बम (खर्च) आ जाता है और फिर खर्च हो जाते हैं। यानी जमा तो होते ही नहीं है कभी भी और कमी पड़ी नहीं। बाकी कुछ भी दबाया, करा नहीं है। हमारे पास पैसा आएगा, तब दबाएँगे न? वैसी रकम आती ही नहीं है तो दबाएँगे कैसे? और हमें वैसा कुछ चाहिए भी नहीं। हमें तो न कमी पड़ती है, न ज़्यादा आता है।

व्यवस्थित के बाहर कुछ नहीं कहेंगे

कारण ढूँढने की वजह से ही यह संसार उत्पन्न हुआ है। कारण कहीं पर भी मत ढूँढना। यह तो 'व्यवस्थित' है। 'व्यवस्थित' के बाहर कोई कुछ नहीं कहेगा। आप यों ही अपने ऊपर ले लो और अपने मन में मान लो, तो वह आपकी ही भूल है। पूरा जगत् निर्दोष है। निर्दोष देखकर ही मैं आपको बता रहा हूँ कि निर्दोष है। क्यों निर्दोष है जगत्? शुद्धात्मा निर्दोष है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : निर्दोष है।

दादाश्री : फिर दोषित क्या लगता है? यह *पुद्गल*। अब *पुद्गल* उदय कर्म के अधीन है' ज़िंदगी भर। अब उदय कर्म में जैसा हो वैसा वह कहेगा, उसमें आप क्या कर सकते हो? देखो तो सही, दादा ने इतना अच्छा विज्ञान दिया है कि कभी भी झंझट ही नहीं होगी!

शुद्धात्मा और लट्टू दो ही

प्रश्नकर्ता : जब ऐसा सुनते हैं तब लगता है कि दादा ने सारे, कितनी तरह के एडजस्टमेन्ट लिए होंगे!

दादाश्री : हाँ, जो किस्मत में लिखा है, उससे तो छूट ही नहीं सकते न! हमारे गाँव के

थे, चचेरे भाई थे इसलिए हमें भी सीधे रहना पड़ता था उनके सामने। अगर कभी बुरा लग जाए न, तो वापस सही करना पड़ता था। हाथ वगैरह फेरना पड़ता था।

लेकिन यह सब ड्रामेटिक था। कैसा? अगर ड्रामे में अभिनय नहीं किया जाए न, तो मालिक दंड देगा। ये जो रिश्तेदार होते हैं न, वे तो मुझसे ऐसा कहते हैं कि, 'आप तो अब सत्संग करने लगे हो। आपको तो अब दुनिया की कुछ पड़ी ही नहीं है।' मैंने कहा, 'अरे, नहीं! आपके बिना मुझे अच्छा ही नहीं लगता।' जब ऐसा कहते हैं तो फिर वे वापस खुश हो जाते हैं! लो, वापस भूल जाते हैं! वे भी भूल जाते और हम तो भूलकर ही बैठे हैं न! फिर हम नाटक करते हैं। 'आपकी तो बात ही अलग है, आप तो ब्लड रिलेशन वाले हो।' ऐसा सब नाटक करते हैं वापस। देखो! खुद ही भादरण जाकर आए हैं न हम? चचेरे भाईओं से भी दूरी नहीं रखी। गाँव में से एक-दो लोग नहीं आए थे, जो बहुत ही विरोधी होंगे, वे। बल्कि उन दो लोगों ने क्या किया? उन्हें जहाँ पर भी लोग दिखाई देते थे तो वहाँ कह आते कि, 'मैं कहता हूँ, दादा भगवान आए हैं।' तो एक व्यक्ति ने कहा भी सही कि, 'वह तो बल्कि आपका प्रोपगेन्डा (प्रचार) कर देंगे।' हाँ, वे तो जगह-जगह पर कहकर आए! 'वहाँ मत जाना, दर्शन करने।' ऐसा है यह जगत् तो! अगर वह मिले तो हमें उसके प्रति अभिप्राय नहीं रहेगा। अगर वह मिल जाए तो उसे पता भी नहीं चलेगा कि मुझे उसकी इस बात की खबर है! क्योंकि उसके लिए क्या अभिप्राय रखना? जब वह खुद ही लट्टू है तो। शुद्धात्मा और लट्टू दो ही हैं, इसके अलावा है ही क्या?

उसके पिता जी दर्शन कर गए थे बेचारे और वह तो वहाँ पूरे गाँव में टेढ़ा ही बोलता रहा। (सत्संग कार्यक्रम में) जब हमारे बिगुल बजे न, तो उसे अच्छा नहीं लगा। पहले उसी को सुनाई देता था, क्योंकि वह इंतज़ार करके ही बैठा रहता था न!

ऐसा है यह जगत् तो! फिर भी मिलने पर उसे ऐसा नहीं लगेगा कि वह हम से अलग है क्योंकि हमें जुदाई है ही नहीं। वह बेचारा लट्टू है, लट्टू के लिए क्या अभिप्राय? उसके हाथ में सत्ता नहीं है, संडास जाने की भी सत्ता नहीं है। वह जो कुछ भी कर रहा है, वह सब मेरा ही हिसाब दिखा रहा है। सही है न, उसमें उस बेचारे के पास कोई सत्ता ही नहीं है न! वह शुद्धात्मा ही है, उसके शुद्धात्मा को हमारे नमस्कार हैं।

शुद्धात्मा की दृष्टि रखने से छूटते हैं अभिप्राय

आपको अभिप्राय रहित ज्ञान ही दिया है। बाइ रियल व्यू पोइन्ट, वह 'शुद्धात्मा' है और बाइ रिलेटिव व्यू पोइन्ट, वह 'चंदूभाई' है और रिलेटिव मात्र कर्म के अधीन होने से 'चंदूभाई' भी निर्दोष है। यदि खुद स्वाधीन होते तो 'वे' दोषित माने जाते लेकिन 'वह' बेचारा तो लट्टू जैसा है। इसलिए 'वह' निर्दोष है। 'वैसे शुद्धात्मा है और बाहर से निर्दोष है।' बोलो अब, वहाँ पर अभिप्राय रहित ही रहना चाहिए न!

अभिप्राय तो पूरा ही छूट जाना चाहिए। अभिप्राय तो बिल्कुल होना ही नहीं चाहिए। किंचित्मात्र भी अभिप्राय हो, कही पर रह गया हो, तो उसे तोड़ देना चाहिए! ऐसा अभिप्राय तो रहना ही नहीं चाहिए! और वे अभिप्राय, वे हमारे नहीं हैं! वे अभिप्राय सब चंदूभाई के! 'मैं तो दादा का दिया हुआ शुद्धात्मा हूँ', और शुद्धात्मा, वही परमात्मा है! इतना समझ लेने की ज़रूरत है! ये पाँच आज्ञाएँ दी हैं, वे 'शुद्धात्मा' के 'प्रोटेक्शन' के लिए हैं!

जानने वाला और बोलने वाला, दोनों अलग

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसे जुदा नहीं रहता। क्या करूँ मैं?

दादाश्री : वह अलग ही रहता है। आप जानते हो इसलिए अलग ही कहा जाएगा न! अलग हुए बगैर जानेगा कौन? जानने वाला और बोलने वाला दोनों अलग ही हैं। इसलिए अलग ही रहता है। आपका आत्मा जुदा रहता है। आपको समझ में नहीं आया?

प्रश्नकर्ता : आया न! मुझे सामने वाले में, किसी में भी शुद्धात्मा नहीं दिखाई देते।

दादाश्री : शुद्धात्मा नहीं दिखें तो उसमें हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : अगर शुद्धात्मा दिखें तब तो दोष ही नहीं देखूँगा न? मुझे सामने वाले के दोष ही दिखाई देते हैं।

दादाश्री : दोष तो चंदूभाई देखता है, आप कहाँ देखते हो? ऐसा पागलपन करते हो! चंदूभाई दोष देखे तब अगर आप डाँटते रहोगे तो अलग हो जाएगा, फिर हर्ज नहीं है। ज्यों-ज्यों आप डाँटोगे न, त्यों-त्यों आत्मा मज़बूत होता जाएगा। और यदि ऐसा कहो कि, 'देखो मुझे ऐसा हो रहा है?' तो आत्मा मलिन हो जाएगा।

जहाँ शुद्धात्मा नहीं देखते वहाँ दोषित दृष्टि

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा नहीं देखते तभी दोषित दिखाई देते हैं न?

दादाश्री : दोषित कब दिखाई देते हैं कि शुद्धात्मा नहीं देखें तब दोषित दिखता है और दूसरा, उसका हिसाब नहीं निकाला उसने। एक्ज़ेक्टली (वास्तव में) यदि हिसाब निकाले तो वह खुद ही कहेगा, दोष देखने वाला ही कहेगा, 'भाई, मेरी ही भूल है यह तो।' इसीलिए यों अकेला शुद्धात्मा देखने से ही कुछ खतम नहीं होता है। वह तो आगे ही आगे चलता रहता है। वह तो पद्धति के अनुसार निकाल होना चाहिए। यानी कि कुल मिलाकर सार निकालना चाहिए कि किस तरह उसका दोष नहीं है। हाँ, उसका दोष नही है फिर भी दिखाई क्यों देता है?

भगवान महावीर ने कहा है कि, 'पूरा जगत् निर्दोष है, जो भी भूल थी वह मेरी ही थी और वह पकड़ में आ गई।' और वह मुझे भी पकड़ में आ गई, मेरी भूल। और अब आपको क्या कहता हूँ? आपकी भूलें पकड़ो। मैं और कुछ कहता ही नहीं हूँ। जैसी पतंग की डोर मेरे पास है, वैसी पतंग की डोर आपके पास है। शुद्धात्मा का ज्ञान खुद प्राप्त किया इसलिए पतंग की डोर हाथ में रही। पतंग की डोर हाथ में नहीं हो और गोता खाए और चीखें-चिल्लाएँ, कूद-फाँद करें, उससे कुछ मिलता नहीं है। पर हाथ में डोर हो और खींचें तो गोते खाना बंद हो जाता है या नहीं हो जाता? वह डोर मैंने आपके हाथ में दे दी है।

दोषित कब माना जाएगा? जब उसका शुद्धात्मा ऐसा करता है तब। लेकिन शुद्धात्मा तो अकर्ता है। वह कुछ भी कर सके ऐसा नहीं है। यह तो 'डिस्चार्ज' हो रहा है, उसमें तू उसे दोषित मानता है। यदि दोष दिखाई दे तो उसका प्रतिक्रमण करना है। जब तक जगत् में कोई भी जीव दोषित दिखाई देता है, तब तक समझना कि अंदर शुद्धिकरण नहीं हुआ है, तब तक इन्द्रिय ज्ञान है।

इसलिए आपको यह निर्दोष देखना है। निर्दोष दृष्टि से ऐसे शुद्धात्मा देखकर 'उसे' निर्दोष बनाना है। वह थोड़ी देर बाद फिर अंदर से चीखेगा-चिल्लाएगा। 'यह ऐसा-ऐसा करता है, उसे क्या निर्दोष देखते हो?' उस समय एक्ज़ेक्टली

निर्दोष देखना है और जैसा है वैसा एक्ज़ेक्टली निर्दोष ही है। क्योंकि यह जगत् जो है न, वह आपको दिखता है वह सब आपका परिणाम दिखता है, कॉज़ेज़ नहीं दिखते। अब परिणाम में किसका दोष?

प्रश्नकर्ता : कॉज़ेज़ का दोष।

दादाश्री : कॉज़ेज़ करने वाले का दोष। यानी परिणाम में दोष किसी का नहीं होता है। जगत् परिणाम स्वरूप है। यह तो एक मैंने आपको बहुत ही छोटा हिसाब निकालना सिखाया है। और बहुत हिसाब हैं सारे। कितने ही हिसाब इकट्ठे हुए, तब मैंने एक्सेप्ट किया, जगत् निर्दोष है, ऐसा। नहीं तो यों ही एक्सेप्ट होता है क्या? यह कोई गप्प है?

मुझे जगत् निर्दोष दिखता है। जब आप में ऐसी दृष्टि आएगी, तब यह पज़ल सॉल्व हो जाएगा। मैं आपको ऐसा उजाला दूँगा और इतने पाप धो डालूँगा कि जिससे आपका उजाला रहे और आपको निर्दोष दिखता जाए और साथ-साथ पाँच आज्ञा दूँगा। उन पाँच आज्ञा में रहोगे तो वह जो दिया हुआ ज्ञान है, उसे ज़रा भी फ्रेक्चर नहीं होने देंगी।

'मैं शुद्धात्मा हूँ', वही ध्येय

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा के ध्येयपूर्वक रहना है और यह प्रकृति भी खपानी है, ऐसा कैसे हो सकता है?

दादाश्री : यदि आज्ञा में रहे तो! आज्ञा ऐसी चीज़ है कि आपका पूरा निबेड़ा ला दे और फिर आपको कुछ खाने को मना थोड़े ही किया है। थाली में रस-रोटी आ गई तो समभाव से *निकाल* करना। उस फाइल में हर्ज क्या है?

प्रश्नकर्ता : कोई हर्ज नहीं है।

दादाश्री : हं, ये दो बेटे हैं, इनकी शादी रचाना, बेटी की शादी रचाना। क्या कोई मना करता है? लेकिन समभाव से *निकाल* करना। दस-पंद्रह लाख रुपये खर्च करके नहीं। रीति अनुसार, नोर्मल लोग करते हैं, वैसे।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा पालन करना, वह महात्माओं के लिए ध्येय माना जाएगा न?

दादाश्री : नहीं, आज्ञा का पालन करना वह ध्येय नहीं है। ध्येय तो आत्मा, लेकिन ध्येय प्राप्ति के लिए आज्ञा का पालन करना है। वर्ना ध्येय प्राप्त नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा भान हुआ है महात्माओं को, यानी कि ध्येय प्राप्त हुआ है, ऐसा कह सकते हैं न?

दादाश्री : लेकिन उस ध्येय की पूर्णाहुति होनी चाहिए न! यानी कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ', उस ध्येयपूर्वक ही चलना है।

हर एक में तीन चीज़ें हैं: शुद्धात्मा, अंहकार और प्रकृति। आपका (महात्माओं का) अंहकार निर्मूल हो चुका है। अब आप में दो चीज़ें बची। एक, प्रकृति और दूसरा, शुद्धात्मा। महावीर भगवान ने दो भाग किए : 1. प्रकृति के परिणाम 2. शुद्धात्मा के परिणाम। वे दोनों धाराएँ अलग बहती हैं।

शुद्धात्मा से अलग होते ही, विलय हो जाती है प्रकृति

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा के पद पर आने के बाद *लक्ष* आ गया। उसके बाद जागृति ठीक तरह से, बिल्कुल टॉप पर ही रहनी चाहिए न! वह (डिस्टर्ब) इधर-उधर क्यों हो जाती है?

दादाश्री : वह इधर-उधर नहीं होती। जो

इधर-उधर होता है, वह अलग है और यह जागृति अलग है। दोनों अलग-अलग ही चलते हैं न! हैं ही अलग-अलग।

प्रश्नकर्ता : इस तरह से अलग कब तक? ठेठ तक अलग ही चलता रहेगा?

दादाश्री : यह तो, जब तक फाइलें हैं तब तक। जब तक फाइलें हैं तब तक अंतरात्मा। फाइलें खत्म होने पर परमात्मा। इन्टरिम गवर्नमेन्ट (बीच की सरकार) के बाद फुल गवर्नमेन्ट (पूर्ण सरकार)। यानी कि ये फाइलें परेशान करती हैं।

प्रश्नकर्ता : हाँ। फिर भी ये सब फाइलें हैं। वे अपने लिए चाहे कितना भी खराब करें, फिर भी उनके लिए अंदर से यों खराब भाव नहीं होता। लेकिन जब फाइलें सामने आएँ तब सामने वाला व्यक्ति निर्दोष दिखाई देना चाहिए, एकदम से जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं होता। कुछ देर बाद होता है।

दादाश्री : जागृति तो रहती है लेकिन खुद कमज़ोर पड़ जाता है। पहले की आदत है न!

प्रश्नकर्ता : दादा, एक बार शुद्धात्मा में बैठाने के बाद फिर कमज़ोर क्यों पड़ जाता है?

दादाश्री : कोई गाली दे तो वापस उसमें हाथ डाल देता है। उसे ऐसा लगता है कि, 'मुझे गाली दी।' वास्तव में उसे गाली नहीं देता। वह तो अपनी जगह पर ही है। भला वापस यहाँ कहाँ आ गए? अक्रम विज्ञान क्या कहता है? कोई दोषित है ही नहीं।

'व्यवस्थित' प्रेरणा देता है और प्रेरणा से सब चल रहा है। उसे 'हमें' 'देखते' रहना है। फिल्म और फिल्म देखने वाले को, दोनों को थकान नहीं होती। देखने वाले को थकान नहीं होती, न ही फिल्म को थकान होती है। देखने से कोई असर नहीं होता। देखने और जानने से कोई असर नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : अब ये जो फाइलें आईं, समभाव से *निकाल* किया, तब प्रकृति की जो भी उलझनें थीं, जो कुछ भी हुआ, वह सब हम देखते रहते हैं। यों देखते रहने से प्रकृति पूरी शुद्ध होती जाएगी न?

दादाश्री : होगी न पूरी। शुद्ध होती जाएगी। जैसे-जैसे आप देखोगे न, वैसे-वैसे आपकी देखने की शक्ति बढ़ती जाएगी। क्योंकि शक्ति मल्टीप्लाइ होती है और साफ हो जाता है। अंदर आनंद होता है। यह तो, अगर सिर दुःखे तो कहेगा, 'मेरा सिर तो बहुत दुःख रहा है।' अरे! लेकिन तेरा दुःख रहा है या चंदूभाई का दुःख रहा है? तू तो शुद्धात्मा है। तो कहेगा, 'हाँ, मैं तो शुद्धात्मा हूँ। यह तो चंदूभाई का दुःख रहा है।' अब चंदूभाई का सिर दुःख रहा है, उसमें, 'मेरा सिर दुःखा' कहा, तो असर हो गया!

आप शुद्धात्मा हो गए तो प्रकृति साहजिक हुई। जो साहजिक है वह तो *डखोडखल* (दखलंदाज़ी) करने दे वैसी होती नहीं है। और क्योंकि साहजिक हो गई है, तो वह व्यवस्थित है। अतः हम आप से ऐसा नहीं कहते कि, 'तुझे खराब विचार आए तो तू ज़हर पी ले।' अब तो अगर खराब विचार आया तो खराब को जाना और अच्छा विचार आया तो अच्छे को जाना। लेकिन अब यह सब विलय कैसे होगा? कितना कुछ तो ऐसा है जो कंट्रोल में नहीं आ सकता। आप जो कह रहे हो, वह ऐसी चीज़ है जो विलय नहीं हो सकती। उसका हमें रास्ता निकालना पड़ेगा। एकाध घंटे बैठकर ज्ञाता-ज्ञेय के संबंध से वह चीज़ विलय होगी। जिस भी प्रकृति को विलय करना हो, वह इस तरह से

विलय हो सकती है। एक घंटा बैठकर और खुद ज्ञाता बनकर उस चीज़ को ज्ञेय के रूप में देखो। तो वह प्रकृति धीरे-धीरे विलय होती जाएगी। सभी तरह की प्रकृतियाँ यहाँ पर खत्म हो सकती हैं, ऐसा है।

शुद्ध स्वरूप से देखने पर, प्रकृति होती है सहज

प्रश्नकर्ता : यदि सामने वाले के साथ एडजस्ट होना हो तो उसमें शुद्धात्मा ही देखना चाहिए न? अगर हम शुद्धात्मा रूप से देखेंगे तभी एडजस्ट हो सकेंगे न?

दादाश्री : हाँ! और क्या? जो आज्ञा का पालन करते हैं, वे एडजस्ट हो ही जाते हैं। आज्ञा पालन करो और शुद्धात्मा देखो, उसकी फाइल को भी देखो। रिलेटिव को और रियल को, दोनों को देखो।

प्रश्नकर्ता : खुद की प्रकृति को, सामने वाले की प्रकृति के साथ एडजस्ट करवाने के बजाय अब, यदि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और सामने वाले को 'शुद्धात्मा' रूप से देखूँ, तो प्रकृति अपने आप एडजस्ट हो जाएगी न?

दादाश्री : हो ही जाएगी। यदि मारेंगे तो प्रकृति उछलेगी, वर्ना यों ही सरल-सहज भाव में आ जाएगी। यह खुद असहज हुआ न, इसलिए वह प्रकृति कूदती रहती है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जिन्होंने ज्ञान लिया है, उनकी प्रकृति सहज रहती है, परंतु सामने वाले ने नहीं लिया हो, उनकी थोड़ी न, सहज रहती है?

दादाश्री : लेकिन जो ज्ञान वाला है, वह दूसरे की प्रकृति के साथ सहज रूप से काम कर सकता है, यदि मृत अहंकार बीच में दखल न करे तो।

प्रश्नकर्ता : दो व्यक्ति आमने-सामने हो, एक ने दादा का ज्ञान लिया है तो वह खुद की प्रकृति को सहज करता जाता है, इस तरह से ज्ञान में रहकर, पाँच आज्ञा का पालन करके, लेकिन सामने वाला वह व्यक्ति, जिसने दादा का ज्ञान नहीं लिया है, उसकी प्रकृति कैसे सहज होगी?

दादाश्री : नहीं, उससे कुछ लेना-देना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : अब उसकी प्रकृति तो सहज नहीं होगी लेकिन क्या हमें उससे कोई दिक्कत आएगी?

दादाश्री : अपनी तो, ये जो पाँच आज्ञाएँ हैं न, वे आपके लिए सभी तरह से सेफसाइड है। अगर आप उनमें रहोगे न, तो कोई भी आपको परेशान नहीं करेगा, बाघ-सिंह कोई भी। बाघ को जितने समय तक आप शुद्धात्मा के रूप से देखोगे, उतने समय तक वह अपना पाशवी धर्म, पशु योनि का जो धर्म है, उसे भूल जाएगा। यदि वह अपना धर्म भूल गया तो फिर कुछ नहीं करेगा।

यदि खुद शुद्धात्मा हो जाए तो स्पंदन होने बंद हो जाएँगे और स्पंदन बंद हुए तो धीरे-धीरे प्रकृति सहजता में आ जाएगी। दोनों सहजता में आ जाएँ, उसी को कहते हैं वीतराग।

शुद्धात्मा देखते ही, प्रकृति भी निर्दोष दिखाई देती है

प्रश्नकर्ता : अर्थात् सामने वाले में शुद्धात्मा देखने से उसमें कोई परिवर्तन आता है क्या?

दादाश्री : ऑफ कोर्स (पक्का) इसीलिए मैं कहता हूँ न कि घर के लोगों को 'शुद्धात्मा' रूप से देखो। कभी देखा ही नहीं न! आप घर में घुसते ही बड़े बेटे को देखते हो तो आपकी दृष्टि में ऐसा कुछ नहीं रहता है। बाहर की दृष्टि

से तो, 'कैसे हो, कैसे नहीं', सबकुछ करते हैं लेकिन यदि भीतर में कहो कि, 'साला नालायक है', तो इस प्रकार से देखने पर उसका असर होगा और यदि 'शुद्धात्मा' देखागे तो उसका भी असर होगा।

यह संसार सारा असर वाला है। यह इतना ज़्यादा इफेक्टिव है न कि बात मत पूछो। जब हम विधि करते हैं न, तब हम ऐसा ही करते हैं, असर डालते हैं, विटामिन डालते हैं इसलिए ये शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं। वर्ना, शक्ति कैसे मिलती? मैं अनंत जन्मों की कमाई लेकर आया हूँ और आप यों ही राह चलते आ गए।

प्रश्नकर्ता : आप ने कहा कि, 'हम शुद्धात्मा को शुद्धात्मा के रूप में देखते हैं। भीतर में ये शुद्धात्मा तो निर्दोष ही हैं...'

दादाश्री : वे तो भगवान ही हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन हमें उसकी प्रकृति भी निर्दोष दिखाई देती है।

दादाश्री : हाँ, वह प्रकृति निर्दोष दिखनी चाहिए।

शुद्धात्मा के आधार से टूटता है प्रकृति का आधार

आत्मा और यह प्रकृति दोनों ही अलग हैं, स्वभाव से अलग हैं। सब तरह से अलग हैं। संसार में आत्मा बिल्कुल भी उपयोग में नहीं आता। सिर्फ आत्मा का प्रकाश ही उपयोग में आता रहता है। वह प्रकाश नहीं हो तो यह प्रकृति बिल्कुल भी चलेगी ही नहीं। यह प्रकाश है, तो यह सारी प्रकृति चल रही हैं, बाकी आत्मा इसमें कुछ भी नहीं करता।

खुद का बनाया हुआ महल हो तब तो गिरा दें, परंतु यह महल तो प्रकृति का बनाया हुआ है। इसलिए पद्धतिपूर्वक समझ-समझकर करने जैसा है।

'ज्ञानी पुरुष' जानते हैं कि यह महल किस तरह से बनाया गया था और इसके कंगूरे कहाँ पर रखे हुए हैं, क्या करने से पहली मंजिल टूटेगी, फिर दूसरी मंजिल टूटेगी, 'ज्ञानी' वह सब जानते हैं।

पहले किस आधार पर जी रहे थे?

प्रश्नकर्ता : मन की इच्छाएँ।

दादाश्री : वे सभी आधार गलत थे। वे कब निराधार हो जाएँगे, कहा नहीं जा सकता क्योंकि कोई भी अपना नहीं बनता न! इस जगत् में कोई भी कभी भी अपना नहीं बन सकता। कुछ समय में जब कोई मतभेद हो जाए तो अलग। और मतभेद होने में देर ही नहीं लगती न! अतः ये सब आधार गलत हैं। सिर्फ खुद के शुद्धात्मा का आधार ही सच्चा है और यदि वह प्राप्त हो जाए तो शांति ही रहेगी न! बाकी इन आधारों से तो लोग मार खा-खाकर थक चुके हैं।

प्रश्नकर्ता : आधार से लिपटी हुई जो वृत्तियाँ हैं, वे किस तरह छूटेंगी?

दादाश्री : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह *लक्ष* रहता है आपको?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो फिर आधार रहा ही नहीं। वृत्ति रहेगी ही नहीं। वह जो वृत्ति रहती है वह निराधार की है, आधार की नहीं है। जब से आधारी का आधारभाव छूट जाता है, फिर जो निराधारी हुआ उसकी ही वे वृत्तियाँ हैं। हमें यह लक्ष में रहना चाहिए कि ये वृत्तियाँ हमारी नहीं हैं। हम में वृत्ति नाम का कुछ है ही नहीं। हम लोगों की तो निजवृत्ति निजभाव में ही रहा करती है, स्वाभाविक होने के बाद!

शुद्धात्मा और प्रकृति स्वभाव

'निज स्वरूप' का भान होने के बाद, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा बोला तब से निर्विकल्प होने लगता है और उसके अलावा अगर और कुछ बोला कि, 'मैं ऐसा हूँ, मैं वैसा हूँ', वे सब विकल्प हैं। उससे पूरा संसार खड़ा हो जाता है, और निर्विकल्प पद में जाता है। अब इसके बावजूद भी इन 'चंदूभाई' के तो दोनों कार्य चलते ही रहेंगे, अच्छे और बुरे दोनों कार्य चलते ही रहेंगे। यों उल्टा भी करेगा और सीधा भी करेगा, यह प्रकृति का स्वभाव है। सिर्फ उल्टा या सिर्फ सीधा कोई कर ही नहीं सकता। कोई थोड़ा बहुत उल्टा करता है तो कोई अधिक उल्टा करता है!

प्रश्नकर्ता : नहीं करना हो तो भी हो ही जाएगा?

दादाश्री : हाँ, हो ही जाएगा, इसलिए 'मैं शुद्धात्मा हूँ', ऐसा तय करके यह सब उल्टा-सुल्टा देख! तुझे उल्टा-सुल्टा अंदर आए, तब तुझे मन में ऐसी कल्पना नहीं करनी है कि 'मुझसे उल्टा हो गया, मेरा शुद्धात्मा बिगड़ गया!' शुद्धात्मा अर्थात् मूल तेरा ही स्वरूप है। यह जो उल्टा-सीधा होता है, ये तो परिणाम आए हैं। पहले भूलें की थी, उनके ये परिणाम हैं। वे परिणाम 'देखते' रहो। और उल्टा-सुल्टा तो यहाँ पर लोगों की भाषा में है। भगवान की भाषा में उल्टा-सुल्टा कुछ है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : उल्टा-सुल्टा यदि भगवान की भाषा में नहीं है तो फिर माथापच्ची करनी रही ही कहाँ?

दादाश्री : कुछ भी माथापच्ची नहीं करनी है। इसलिए मैं कहता हूँ कि, ''देखो' और किसी को दुःख नहीं हो, और यदि दुःख हो जाए तो उसका प्रतिक्रमण करना, ऐसा भगवान ने कहा है।''

प्रश्नकर्ता : उल्टा-सीधा भगवान की भाषा में रहा ही नहीं, तो फिर प्रतिक्रमण करने को रहा ही कहाँ?

दादाश्री : सामने वाले को दुःख होता है, इसलिए। 'सामने वाले को दुःख नहीं होना चाहिए', यह भगवान की भाषा है न!

प्रश्नकर्ता : परंतु अपना आशय अच्छा होता है, फिर भी दुःखी होते हैं?

दादाश्री : आशय अच्छा हो, चाहे जो हो, परंतु उसे दुःख नहीं होना चाहिए। अर्थात् सामने वाले को दुःख हुआ, तभी से (कर्म) चिपकेगा। इसलिए सामने वाले को दुःख नहीं हो, उस तरह से काम लेना।

शुद्धात्मा पद के बाद प्रतिक्रमण किसके?

शुद्धात्मा (पद) किसलिए दिया गया है कि आप शुद्ध ही हो। अब चाहे जो कुछ भी आए। चंदूभाई से कोई दोष हो जाए, फिर भी आप शुद्ध ही हो। दोष, वह पूर्वकर्म का हिसाब है। अब खुद के हिसाब का तो आपको *निकाल* कर देना है। उस दोष से यदि सामने वाले को दुःख हो जाए तो आपको चंदूभाई से कहना है, 'भाई, पश्चाताप करो। पछतावा करो।' 'दोबारा नहीं करूँगा', ऐसा निश्चय करो।

प्रश्नकर्ता : दादा, अभी भी मुझे वह समझ में नहीं आया कि एक शुद्धात्मा पद दे दिया, फिर किसलिए प्रतिक्रमण करना है? फिर (प्रतिक्रमण करना) होता ही नहीं न?

दादाश्री : नहीं, प्रतिक्रमण करोगे तो भी कोई आपत्ति नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मुझे नहीं करना है, ऐसा नहीं है लेकिन कैसे करना है? मैं चंदूलाल में रहता हूँ या मैं शुद्धात्मा में रहता हूँ।

दादाश्री : प्रतिक्रमण हमें खुद को नहीं करने हैं। आत्मा को भी प्रतिक्रमण नहीं करने हैं। यदि आत्मा को करने होते तब तो वे होते ही नहीं। यह तो, हमें 'चंदूलाल' से ऐसा कहना है, पड़ोसी की तरह कि 'भाई, ऐसे अतिक्रमण क्यों कर रहे हो?'

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, हम पड़ोस में क्यों जाएँ?

दादाश्री : पड़ोसी, वह अपनी खुद की पिछली भूलों का परिणाम है। वह अपनी 'गुनहगारी' है।

एक बात बताता हूँ आपको, वह बात सुनो। एक लड़का इस अहमदाबाद शहर में ज़रा शौक़ीन हो जाए और दो-एक हज़ार का कर्ज़ा कर ले। अब यदि वह लड़का आज से यह निश्चय करे कि, 'मुझे एक पाई का भी कर्ज़ा नहीं लेना है।' आज निश्चय करे और एक्ज़ेक्टली वैसा ही व्यवहार करे, एक पाई का कर्ज़ा न ले और जितनी आमदनी है, वह घर में दे दे। फिर भी जो पिछला कर्ज़ है, वह तो चुकाना ही पड़ेगा न, या नहीं चुकाना पड़ेगा? अब नहीं करना है, फिर भी किसलिए पिछला कर्ज़ चुकाना पड़ता है? वैसे ही यह 'चंदूलाल', वह पिछली भूलों का फल है। वह तो बहीखाते में है, उसका निपटारा तो करना ही पड़ेगा न?

प्रश्नकर्ता : तो फिर ज्ञान लेने के बाद कोई प्रतिक्रमण नहीं करने पड़ते न?

दादाश्री : नहीं करे तो हर्ज नहीं है। यह करना ही है, ऐसा ज़रूरी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मुझे करने में कोई हर्ज नहीं है। मेरा उसमें विरोध भी नहीं है। लेकिन मुझे यह समझना है। ऐसा प्रश्न उठता रहता है।

दादाश्री : प्रतिक्रमण करने से क्या होता है? कि आत्मा उसके 'रिलेटिव' पर खुद का दबाव डालता है। क्योंकि अतिक्रमण करने से क्या हुआ कि रियल पर दबाव आया। जो कर्म है, वह अतिक्रमण है और अब यदि उसमें इन्टरेस्ट आए तो फिर से डेन्ट (चिपकने का निशान) पड़ जाएगा। यानी कि जब तक हम गलत को गलत नहीं मानेंगे, तब तक गुनाह है। अर्थात् ये प्रतिक्रमण (चंदूलाल से) करवाने की ज़रूरत है।

शुद्धात्मा के भान के साथ जीवंत प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : नेचर के हाथ में गया तो भी प्रतिक्रमण करने से क्या फायदा होता है?

दादाश्री : बहुत असर होता है। प्रतिक्रमण से तो सामने वाले व्यक्ति को इतना ज़्यादा असर हो जाता है कि यदि कभी एक घंटा एक व्यक्ति का प्रतिक्रमण करे तो उस व्यक्ति में कुछ नए प्रकार का बदलाव आ जाता है, बहुत ज़बरदस्त बदलाव आता है। प्रतिक्रमण करने वाला यह ज्ञान लिया हुआ होना चाहिए। शुद्ध हो चुका, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' जिसे ऐसा भान है उसके प्रतिक्रमण का तो बहुत असर होगा। प्रतिक्रमण तो हमारा सब से बड़ा हथियार है!

अपने यहाँ दो-तीन घंटे प्रतिक्रमण करता है, तो दो-तीन घंटे तक तो दोष ही दिखाई देते हैं। इसे जीवंत प्रतिक्रमण कहते हैं। जब यह प्रतिक्रमण करने बैठे न, तब तो शुद्धात्मा ही हो जाता है। एक बार प्रतिक्रमण करने बैठे कि फिर तो प्रतिक्रमण होते ही रहते हैं न? आपको नहीं करने हों तो भी होते रहते हैं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, फिर होते रहते हैं।

दादाश्री : मैंने कहा, 'बंद कर दो अब तो?'

प्रश्नकर्ता : तो चरखी चलती ही रहती है।

दादाश्री : कौन चलाता है वह? तब

कहे, 'शुद्धात्मा' प्राप्त हुआ है, यह सब क्रिया प्रज्ञा की है। पहले 'अज्ञा' की क्रिया थी। यह तो ऐसा है कि वे सब लोग (क्रमिक) जब शुद्धात्मा बोलते हैं, उस समय 'अज्ञा' की क्रिया ही चलती है, प्रज्ञा की क्रिया उत्पन्न नहीं हुई है। क्या हुआ है? आपमें 'अज्ञा' की क्रिया बंद हो गई है और प्रज्ञा की क्रिया शुरू हो गई है। 'अज्ञा' की क्रिया क्या करती है? वह निरंतर संसार बढ़ाती ही रहती है, रोज़-रोज़ नया-नया (संसार) उत्पन्न कर देती है।

शुद्धात्मा रूपी गरुड़ से, दोष भाग जाएँगे

शास्त्रकारों ने एक उदाहरण दिया है कि भाई, इस चंदन के जंगल में केवल साँप ही साँप होते हैं। उस पेड़ से लिपटकर सब बैठे ही होते हैं ठंडक में। चंदन के पेड़ों से लिपटकर, उसके जंगल में। पर एक गरुड़ आए कि सब भागम्भाग-भागम्भाग होती है, उसी प्रकार यह मैंने गरुड़ रख दिया है, सारे दोष भाग जाएँगे। शुद्धात्मा रूपी गरुड़ बैठा है। इसलिए सारे दोष भाग जाने वाले हैं। और 'दादा भगवान' का आशीर्वाद है, फिर उसे क्या भय! मेरे साथ 'दादा भगवान' हैं, तो 'मुझे' इतनी सारी हिम्मत है, तो आपको हिम्मत नहीं आएगी?

प्रश्नकर्ता : हिम्मत तो पूरी-पूरी आती है!

यदि शुद्धात्मा हो तो कषाय मुक्त हो

दादाश्री : आपको यह ज्ञान लिए इतना समय हो गया है, उतने में अंदर जो चंचलता थी वह कितनी बंद हुई? थोड़ी-बहुत बंद हुई है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : पचास प्रतिशत के ऊपर।

दादाश्री : अब यह उछाल बंद करना, उसका नाम मुक्ति। अंदर कुछ रहता नहीं मतलब यह मुक्ति का मार्ग ऐसा सुंदर है हमारा! एक-दो जन्मों में हल ला दे!

प्रश्नकर्ता : दादा, वह तो परिणाम दिखता है। कषाय मंद हो गए ऐसा अनुभव होता है।

दादाश्री : नहीं, कषाय मंद नहीं, कषाय मुक्त हुए हैं।

प्रश्नकर्ता : अब संपूर्ण रूप से मुक्त, ऐसा कहना वह ज़रा ज़्यादा है।

दादाश्री : कह सकते हैं न। ज़्यादा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह मंदता तो बर्तती ही है।

दादाश्री : यदि आप चंदूभाई हो तो कषायों की मंदता है और यदि आप 'शुद्धात्मा' हो तो कषाय मुक्त हो। जिसने कषाय भाव को जीता, वह अरिहंत कहलाया! जहाँ 'मैं शुद्धात्मा हूँ' है, वहाँ कषाय भाव नहीं रहते। जहाँ शुद्ध उपयोग हो, वहाँ पर कषाय भाव नहीं रहते। जहाँ शुद्धात्मा है वहाँ कषाय नहीं हैं और जहाँ कषाय हैं, वहाँ शुद्धात्मा नहीं है। 'अक्रम ज्ञान' में कषाय होते ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : यह 'अक्रम ज्ञान' की महत्ता है न?

दादाश्री : बहुत बड़ी महत्ता है! गज़ब का विकास है यह! नहीं तो एक अंश भी कषाय कम नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह तो ठीक है। तो उस तरह से कषाय मुक्त!

दादाश्री : चंदूभाई है तो मंदता है। क्योंकि मंदता जो है वह चंदूभाई की है और वह डिस्चार्ज के रूप में है और डिस्चार्ज से तो कोई बच नहीं सकता न! अब आप में से क्रोध-मान-माया-लोभ सभी गए। आप में कुछ रहा ही नहीं है। आप

शुद्ध हो गए हैं। अब चंदूभाई में जो माल भरा हुआ है, वह अब डिस्चार्ज के रूप में निकलता रहेगा। अब नया माल चार्ज होना बंद हो गया। इसलिए जो भरा हुआ है वह निकलता रहेगा। वह डिस्चार्ज माल निकलता है। उसमें क्रोध-मान-माया जैसा लगता है आपको, परंतु वास्तव में क्रोध-मान-माया-लोभ हैं नहीं! वे डिस्चार्ज भाव हैं। चंदूभाई उबल पड़े किसी के साथ, गुस्सा हो जाए, वह डिस्चार्ज है, चार्ज नहीं है। यह विज्ञान है! विज्ञान समझने की ही ज़रूरत है। फिर एक क्षण चिंता नहीं होती, *उपाधि* (परेशानी) नहीं होती, ऐसा निरुपाधि!

ज्ञानी पुरुष - खुदा के असिस्टेन्ट

प्रश्नकर्ता : वे कहने लगे, जब ईराक का युद्ध चल रहा था। उस समय आसपास सभी जगह बमबारी हुई, उस समय सभी जगह सुलग रहा था, परंतु मुझे कुछ असर नहीं हुआ। दादाजी का ज्ञान हाज़िर रहा कि, 'व्यवस्थित है, मैं शुद्धात्मा हूँ।'

दादाश्री : हाँ, वहाँ दादाजी हाज़िर रहते थे। उसके बाद उसकी बहन भड़क उठी कि, 'ऐसे कौन से दादाजी वहाँ रक्षण करते हैं?' फिर उसकी बहन दर्शन करने आई कि, ''तेरे गुरु कैसे हैं, मुझे उन्हें देखने आना है। वे 'ज्ञानी पुरुष' कैसे हैं!'' फिर जब आई तो उसके मन को अच्छा लगा, देखते ही उसे अच्छा लगा, उसे शांति मिली कि, 'खुदा के असिस्टेन्ट जैसे तो लगते ही हैं ये!'

हमने इस संसार की बहुत सूक्ष्म खोज की है। अंतिम प्रकार की खोज़ करके हम ये सभी बातें कर रहे हैं। व्यवहार में किस प्रकार से रहना, वह भी हम बताते हैं और मोक्ष में कैसे जा सकते हैं, वह भी हम बताते हैं। आपकी परेशानियाँ किस प्रकार से कम हो, वही हमारा हेतु है।

जब बहुत बड़ी परेशानी आती है तब ज्ञान का अनुभव होता है

यह तो अद्‌भुत ज्ञान दिया है! रात में जब जागें तब हाज़िर हो जाए कि, 'मैं शुद्धात्मा हूँ।' आप जहाँ कहेंगे वहाँ हाज़िर होगा। और बहुत परेशानी आ जाए तो निरंतर जाग्रत रहेगा। बहुत बड़ी मुसीबत आए और उससे भी बड़ी परेशानी आए, बम गिरने लगे तब तो फिर (शुद्धात्मा की) गुफा में घुस जाएगा। केवलज्ञानी जैसी दशा हो जाएगी। बाहर बम गिरने चाहिए तो केवलज्ञान जैसी दशा हो जाए, ऐसा ज्ञान दिया है।

फिर भी हम कहें, 'बम गिरे तो अच्छा है न!' तब लोग कहेंगे, 'नहीं, मत गिरने देना भाई साहब, बम मत गिरने देना।' 'अरे! केवलज्ञानी जैसी दशा हो सकती है, गिरने दे न यहाँ!' और यदि मच्छरदानी में दो मच्छर हों न, तो सारी रात जागता है। 'अरे! क्यों फिर से उठा?' 'लाइट की तो मच्छर घुस गए।' 'अरे, छोड़ न! ये मच्छर तो गुफा में नहीं रहने देते और बम वे गुफा में रहने देते हैं तो कौन-सा अच्छा है?' बम गिरे, वह! झट से हल आ जाए। ऐसा थोड़ा-थोड़ा सिर में छेद हो, उसके बजाय उड़ा दे एकदम से! थोड़ा-थोड़ा छेद हो, सड़े-गले, उसके बजाय निपटा दे न! तब कहेगा, 'यह बम गिरने वाला है। हे भगवान! अभी बम मत गिराना!' अरे भाई, गिरने दे न, तैयार हो जा!

हम माँगेंगे फिर भी नहीं गिर सकते ऐसे। और कीमती बम कौन डाले? कीमती बम हैं, सारे गिरते हों तो हमारे महात्मा 'धन्य है यह दिन' कहकर गुफा में घुस जाएँगे।

बम गिरने से आत्मा का चूरा नहीं होगा, लेकिन सारी वासनाओं का चूरा हो जाएगा। अज्ञानी, जिसे ज्ञान नहीं मिला है, वह तो, 'मेरे बेटे की

शादी करनी थी, बंगला बनवाना था, सारी वासनाएँ अधूरी रह गई।' वह व्यक्ति अधूरी वासनाएँ लेकर मरता है न, तो फिर वह जानवर बनता है। बम गिरने पर कोई व्यक्ति जानवर गति में जाता है और दूसरे को बम गिरने पर मोक्ष जैसा हो लगता है, क्योंकि उसकी वासनाएँ फ्रेक्चर हो जाती है। वह खुद फ्रेक्चर नहीं कर सकता!

आज्ञा देकर, दादा ने ले लिया संसार का भार

यदि पाँच आज्ञा का पालन करेंगे न तो बहुत तेज़ी से... और पाँच आज्ञा ही उसका कारण है। पाँच आज्ञा का पालन करने से आवरण टूटता जाता है, शक्तियाँ प्रकट होती जाती हैं। जो अव्यक्त शक्ति है वह व्यक्त होती जाती है। पाँच आज्ञा के पालन से ऐश्वर्य व्यक्त होता है! तरह-तरह की कई शक्तियाँ प्रकट होती हैं। आज्ञापालन पर आधारित है।

प्रश्नकर्ता : आपने कई बार कहा है, कि 'पाँच आज्ञा में रहने पर हमारी विशेष कृपा उतरती है।'

दादाश्री : कोई जितना हमारी आज्ञा में रहता है, उतनी ही कृपा उतरती है।

प्रश्नकर्ता : विशेष कृपा यानी क्या?

दादाश्री : विशेष यानी संपूर्ण, काम हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : यह जो विशेष कृपा उतरती है, वह इन दादा भगवान की उतरती है, या आपके भीतर जो दादा भगवान हैं, उनकी उतरती है?

दादाश्री : मेरी नहीं, दादा भगवान की। मैं तो कहता हूँ कि, 'इतनी अच्छी तरह आज्ञा पालन करते हैं, कृपा कीजिए।'

'दादा! हमारे संसार का बोझ आप पर और आपकी आज्ञा हमारे सिर आँखों पर!' आपको तो ऐसा बोलना है।

प्रश्नकर्ता : आपकी पाँच आज्ञाओं में, मैं ठीक से रहता हूँ या नहीं, ज़रा यह बताइए न।

दादाश्री : रहते हो न ठीक से, यानी अच्छी तरह से रहते हैं। डाँटने जैसा नहीं है, डाँटना नहीं पड़ता। अच्छी तरह से आज्ञा में रहते हो तो बहुत हो गया। अब वे कहते हैं कि, 'पूर्ण रूप से आज्ञा पालन करता हूँ!' तब मैं कहता हूँ, 'डाँटने जैसा नहीं हैं।'

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह तो हमें मालूम है कि, 'पूर्ण रूप से आज्ञा पालन करना क्या कुछ आसान है!'

दादाश्री : अरे! वह क्या कोई लड्डू खाने का खेल है? वर्ना खुद भगवान महावीर ही बन जाते। वे आज्ञाएँ मैंने दी हैं और मेरी ही हैं और मैं निरंतर आज्ञाओं में ही रहता हूँ न! मैंने दी हैं, लेकिन फिर भी मैं महावीर नहीं बन सकता। लेकिन वह महावीर बन सकता है, क्योंकि आश्रय मेरा है न! यानी कि आश्रयदाता खुद उस पद में नहीं आ सकते, वे उस पद में आ सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे, दादा?

दादाश्री : हाँ, यदि पूरी तरह से आज्ञा पालन करे तो उनकी दशा महावीर जैसी हो जाएगी। उनकी दशा मुझसे भी ज़्यादा ऊँची होगी। जो हमारे पाँच वाक्यों में रहें, वे भगवान महावीर जैसे रह सकते हैं!

दादा ने दी, महावीर प्रभु जैसी शुद्ध दृष्टि

चंदूभाई क्या करते हैं, उसे हमें देखते रहना है। भगवान महावीर पूरे दिन एक ही काम करते थे, एक ही *पुद्गल* को देखते रहते थे। कहाँ-कहाँ अंदर परिवर्तन हो रहा है, अन्य क्या स्पंदन हो रहा है, वही सब देखते रहते थे अंदर। आँख की पलकें फड़फड़ाएँ तो उन्हें भी देखते रहते थे। अब भगवान

महावीर जो यह सब देखते थे न, वह लोग देखते हैं न, उससे कुछ अलग देखते थे। लोग तो इन्द्रिय दृष्टि से देखते हैं और भगवान अतीन्द्रिय दृष्टि से देखते थे। जो इन्द्रिय दृष्टि वाले को नहीं दिखाई देता है, वह सारा भाग भगवान को दिखता था।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, यों देखते रहने की जो यह बात हम कहते हैं लेकिन वास्तव में तो सब से बड़ा पुरुषार्थ तो वही हुआ न। ज्ञाता-द्रष्टा में रहना और *पुद्गल* को देखते रहना।

दादाश्री : वही अंतिम पुरुषार्थ है। भगवान महावीर करते थे वह।

एक आचार्य महाराज ने पूछा, कि 'भगवान, आप ये सब क्या देखते रहते हैं?' तो भगवान ने कहा, 'मैं तो *पुद्गल* को ही देखता रहता हूँ।' बाकी सब तो इन आँखों से दिखता ही है। उसे देखना नहीं कहते।' मैंने तो आपको रास्ता दिखाया है 'देखने' का, क्योंकि अभी आपको ठीक से *पुद्गल* को देखना नहीं आएगा। अत: मैंने क्या कहा है कि रियल और रिलेटिव देखो, बाहर हर एक का रिलेटिव दिखेगा। उसके अंदर रियल देखो तो तीन घंटे अगर इस तरह से देखते जाओगे न तो इतनी अच्छी समाधि रहेगी! तीन घंटे नहीं, एक ही घंटे अगर देखोगे तो भी पुणिया श्रावक जैसी समाधि रहेगी।

और जब औरों के साथ व्यवहार करो न, कोई गालियाँ दे रहा हो तो उसे गाली देने वाले के रूप में देखना ही नहीं चाहिए। शुद्धात्मा देखना चाहिए। कौन गाली दे रहा है, वह देखना चाहिए और वह कौन है, उसे भी देखना चाहिए। दोनों ज्ञान एक साथ रहने चाहिए। और अपना ज्ञान सभी को ऐसा रख सकता है।

प्रश्नकर्ता : आपने दृष्टि दी है न, दादा।

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : यदि दृष्टि नहीं दी होती न तो ये सारी बातें सिर्फ शब्दों में ही रहता।

दादाश्री : हम 'स्वरूपज्ञान' देते हैं, तब प्रज्ञा बैठा देते हैं, फिर वह प्रज्ञा आपको प्रतिक्षण सावधान किया करती है। भरत राजा को तो चौबीसों घंटे (आत्मा में रहने के लिए), अपने आप को सावधान करने के लिए नौकर रखने पड़ते थे! पर यहाँ तो, चाहे कैसा भी विकट संयोग आए तब हमारा ज्ञान हाज़िर हो जाता है, हमारी वाणी हाज़िर हो जाती है, हम स्वयं हाज़िर हो जाते हैं। और आप जागृति में आ जाते हैं! प्रतिक्षण जाग्रत रखे, ऐसा हमारा यह 'अक्रम ज्ञान' है! यहाँ काम पूरा कर लेने जैसा है। यदि एक बार तार जुड़ गया हो तो सदा के लिए हल निकल आए।

अव्याबाध स्वरूपी, जो किंचित्मात्र भी दु:ख न दे

वास्तव में तो ज्ञानी पुरुष ने जो आत्मा जाना है न, वह आत्मा तो किसी को किंचित्मात्र भी दु:ख न दे, ऐसा है। वास्तव में शुद्धात्मा ऐसा है कि वह किसी को किंचित्मात्र भी दु:खी नहीं करता और कोई उसे किंचित्मात्र दु:ख नहीं दे सकता। लेकिन आपको इस सत्संग में बैठ-बैठकर उस पद को पूरी तरह से समझ लेना है कि 'मैं अव्याबाध स्वरूप हूँ। मेरा स्वरूप अव्याबाध है।'

मेरा स्वरूप ऐसा है कि किसी जीव को कभी भी किंचित्मात्र भी दु:खी नहीं कर सकता और सामने वाले का स्वरूप भी ऐसा है कि उसे कभी भी दु:ख नहीं होता। उसी तरह से हमें भी सामने वाला दु:ख नहीं दे सकता, वह अनुभव हो जाता है। सामने वाले को उसका अनुभव नहीं है परंतु मुझे तो अनुभव हो चुका है, फिर मुझसे दु:ख होगा ऐसी शंका नहीं होती। जब तक सामने वाले को मुझसे दु:ख होता है ऐसी ज़रा

भी शंका होती है तो उसका प्रतिक्रमण करना है। उस शंका का निवारण करना है। और 'अपना' तो वही का वही स्वरूप है, अव्याबाध! 'ज्ञानी पुरुष ने' जिस सीट पर बैठा दिया है, उस सीट पर बैठे-बैठे काम करते रहना है!

यदि आपको घर में सभी से प्रेम है लेकिन आपको द्वेष नहीं होता तो समझना कि फिर से बीज नहीं डलेगा और यदि द्वेष होगा तो बार-बार उस पर प्रेम आता रहेगा। उसके बावजूद भी इस ज्ञान के बाद वैसा नया करार नहीं होगा। नए करार के बारे में आप जान लेना। बाकी, अगर इन सब में ज़्यादा गहराई में उतरोगे तो यह तो बहुत गहन साइन्स है!

निरालंब के स्टेशन पर सभी में 'मैं' को ही देखता है

'मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ', वह आत्मा है तो सही लेकिन वह तो प्रवेश द्वार कहलाएगा। अभी तो प्रवेश किया है मोक्षमार्ग में। मुक्ति के मार्ग में प्रवेश हो गया। अब आपका प्रवेश तब पूर्ण होगा जब निरालंब आत्मा मिल जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब शुद्धात्मा हो जाने के बाद में फिर और किसी अवलंबन की ज़रूरत है क्या?

दादाश्री : नहीं, इन सभी अवलंबनों को छुड़वाकर शुद्धात्मा का अवलंबन दिया है। इस अवलंबन में सभी कुछ आ गया और वे सारे (संसार के) अवलंबन छूट गए। फिर यह जो अवलंबन बचा है, वह अपने आप ही छूट जाएगा। यह शुद्धात्मा व शब्दावलंबन है। वह शब्द भी अपने आप ही छूट जाएगा और निरालंब हो जाओगे।

प्रश्नकर्ता : तो फिर आपने जब इस अवलंबन को सब से अच्छा और श्रेष्ठ कहा है तो फिर मान लीजिए कि अगर दूसरी सब क्रियाएँ नहीं हो पाएँ तो कोई हर्ज है क्या?

दादाश्री : नहीं। अगर कुछ नहीं हो पाए तो उसमें भी हर्ज नहीं है और यदि हो जाए तो उनमें तन्मयाकार होकर खिंच नहीं जाना है, अंदर देखते रहना है।

कितने ही अवलंबनों को छोड़ते-छोड़ते आगे बढ़ेगा तब निरालंब आत्मा उत्पन्न (प्राप्त) होगा, जिसे केवल आत्मा कहा जाता है। फिर वहाँ पर बात की पूर्णाहुति हो जाती है। कितने स्टेशन गुज़र जाने के बाद फिर निरालंब का अंतिम स्टेशन आता है और आपका वह आ ही जाएगा। जल्दबाज़ी करने की कोई ज़रूरत नहीं है, और अगर जल्दबाज़ी करनी हो तो सभी में 'मैं'-'मैं' देखते हुए चलते जाना न। सभी में 'मैं हूँ, मैं हूँ, मैं हूँ' वाणी में, मन में, चित्त में।

मैं ही, मैं ही... शुरू हो गई अभेदता की श्रेणी

बाकी, 'तू ही... तू ही.... तू ही' गाया करते हैं, उसके बजाय अब 'शुद्धात्मा हूँ' गाते हैं या नहीं? मैं तो हमारे महात्माओं को कई बार दिखलाता हूँ। बाहर यों गाड़ी में घूम रहे हो न, तब 'मैं ही, मैं ही' बोलते-बोलते जाइए। 'मैं ही हूँ, मैं ही हूँ' आप शुद्धात्मा हो और वे भी सभी शुद्धात्मा हैं इस प्रकार देखते-देखते जाइए। तो फिर 'मैं', 'तू' का भेद नहीं रहा न, जहाँ 'मैं', 'तू' का भेद है, वहाँ पर अलग है और भेद, बुद्धि से होता है।

प्रश्नकर्ता : देहाध्यास जितना कम होता जाता है उतना ही भेद कम होता है?

दादाश्री : हाँ, भेद कम होता जाता है। यह भेद ही मिटाना है न!

अभेदता की प्राप्ति अर्थात् क्या?

प्रश्नकर्ता : अभेदता क्या है? 'संपूर्ण अभेदता प्राप्त हो', ऐसा चरणविधि में माँगते हैं न!

दादाश्री : अभेदता अर्थात् तन्मयाकार। भगवान

के साथ एक हो जाते हैं हम। अभी जो जुदाई है न, शुद्धात्मा और आपमें कितना भेद है कि अभी प्रतीति से शुद्धात्मा हुए हैं। संपूर्ण श्रद्धा बैठ गई है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ', इसका विश्वास हो गया है। थोड़ा बहुत अनुभव हो गया है लेकिन उस जैसे (रूप) हुए नहीं हैं। अत: भगवान से ऐसा कहते हैं कि उसी जैसा (रूप) बना दो। वही अभेदता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् बिल्कुल भी भेद नहीं।

दादाश्री : अभी तक भेद है। अभी मुझे आपको शुद्धात्मा में लाना पड़ता है। बाद में लाना नहीं पड़ेगा। अभेद हो जाना है।

प्रश्नकर्ता : 'अहंकार' शुद्धात्मा के साथ अभेद होता है न?

दादाश्री : नहीं, अहंकार नहीं। व्यवहार का *निकाल* करने के लिए यह जो प्रज्ञा अलग हुई है न, अब वह एक हो जाएगी तो काम हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : कौन किसके साथ अभेद होता है?

दादाश्री : प्रज्ञा और शुद्धात्मा (मूल आत्मा) । ये दोनों जो अलग हैं, वे एक हो जाएँगे। अभी 'मैं'पन प्रज्ञा में बरतता है। हम जिसमें बरतते हैं, वह प्रज्ञा है। अब अहंकार में नहीं बरतते। अत: 'मैं' चंदूभाई में बरतता था, तब अहंकार में कहलाता था। अभी प्रज्ञा में बरतता है। अर्थात् शुद्धात्मा (मूल आत्मा) नहीं, यानी कि वह, जिसे 'अंतरात्मा' कहा गया है।

हमारी यह प्रज्ञा लगभग ऐसी ही है जैसे आत्मा में स्थिर हो गई हो। अत: हमें 'शुद्धात्मा' बोलना नहीं पड़ता या कुछ सोचना नहीं पड़ता और उस रूप में अभेदता जैसा ही लगता है। ज़रा सा बाकी है, चार प्रतिशत की वजह से। जबकि आपको अभेद होना है, धीरे-धीरे करके जैसे-जैसे इन फाइलों का *निकाल* होता जाएगा, वैसे-वैसे अभेद होता जाएगा। फाइलों का पूर्ण रूप से *निकाल* हो गया तो समझो अभेद हो गया। फाइलों की ही झंझट है यह सारी। लेकिन अभी 'वह' प्रज्ञा के रूप में है और प्रज्ञा भगवान का अंश है। जब काम पूर्ण हो जाएगा तब वापस उनमें समा जाएगी। भगवान और आत्मा एक ही हैं। आत्मा जब भौतिक में से छूटकर खुद के स्वरूप में ही रहता है, तब परमात्मा कहलाता है। निरंतर स्वरूप की रमणता, वही परमात्मा है और जब तक स्वरूप की रमणता भी है और यह रमणता भी है, तब तक अंतरात्मा। वही प्रज्ञा है।

'रोंग बिलीफ' खत्म होने से भगवान में अभेद

प्रश्नकर्ता : अगर शुद्धात्मा ही भगवान है, खुद के अंदर ही है, तो फिर वह दूर कहीं पर होगा ही नहीं न?

दादाश्री : हाँ। बस, अंदर हैं, वही भगवान हैं, और कोई भगवान इस जगत् में है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो फिर उस भगवान से खुद को भेद नहीं रहता है न?

दादाश्री : लेकिन अभी तो 'आपको' भेद है। अभेद हो जाएँगे तभी 'भगवान' आपको मिलेंगे, ऐसा है। लेकिन 'आपको' तो 'चंदूभाई' ही रहना है और 'किसी स्त्री का पति बनना है, बेटे का बाप बनना है, किसी का मामा बनना है, किसी का चाचा बनना है।' तो फिर 'भगवान' 'आपको' मिलेंगे ही नहीं न! 'आप' 'भगवान' के हो जाओगे, तो 'वे' 'आपके' साथ अभेद हो जाएँगे। 'आप' 'शुद्धात्मा' हो गए, 'भगवान' के हो गए तो 'आप' अभेद हो जाओगे। यह तो 'आपने' भेद डाला है, 'भगवान' ने भेद नहीं डाला। 'इस स्त्री का पति हूँ' ऐसा कहा, इसलिए भगवान कहते हैं, 'जा, पति बन।' तो इस तरह भगवान के साथ भेद डाला।

आपका कहना ठीक है कि यह भेद क्यों

डल गया? बात तो सच ही है न? भेद तो, ऐसा है न कि भगवान तो खुद अंदर ही हैं, लेकिन एकता क्यों नहीं लगती? भगवान की कभी परवाह ही नहीं की है न! उसे तो 'यह मेरी वाइफ और यह मेरा बेटा, और यह मेरा भाई, यह मेरा मामा', इन सबकी ही पड़ी हुई है। 'भगवान' की 'उसे' पड़ी ही नहीं है। अरे, भगवान की किसी को भी पड़ी नहीं है। भगत को भी भगवान की नहीं पड़ी है। भगत तो मंजीरा और इसी सब धुन में और धुन में, मस्ती में रहे हैं। भगवान की किसी को भी पड़ी ही नहीं है। वे भगवान तो मुझसे रोज़ कहते हैं कि 'किसी को मेरी पड़ी ही नहीं है।' कोई चाय की धुन में, कोई गांजे की धुन में, कोई किसी की धुन में, कोई व्हिस्की की धुन में, कोई वाइफ की धुन में, तो कोई लक्ष्मी की धुन में, बस, धुन में ही पड़ा हुआ है यह जगत्।

शुद्धात्मा भगवान को प्रार्थना

तुझे पसंद हैं अंदर वाले भगवान? अंदर बैठे हैं। उनका नाम क्या है? अंतर्यामी भगवान! उन्हें प्रार्थना करनी है कि, 'हे अंतर्यामी भगवान! मुझे मन की मज़बूती दीजिए,' तो मज़बूती देंगे। और 'श्रद्धा भी दीजिए,' तो वे देंगे। अब अंतर्यामी भगवान की प्रार्थना करनी है। अब तू बाहर के भगवान की तलाश मत करना, अंदर के भगवान की तलाश कर।

'हे अंतर्यामी परमात्मा! आप प्रत्येक जीवमात्र में विराजमान हैं, वैसे ही मुझ में भी विराजमान हैं। आपका स्वरूप ही मेरा स्वरूप है। मेरा स्वरूप शुद्धात्मा है। हे शुद्धात्मा भगवान! मैं आपको अभेद भाव से अत्यंत भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। अज्ञानतावश मैंने जो भी (जो दोष किए हैं, उन सभी दोषों को आपके समक्ष ज़ाहिर करता हूँ।) उनका हृदयपूर्वक बहुत पश्चाताप करता हूँ और आपसे क्षमा-याचना करता हूँ। हे प्रभु ! मुझे क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए और फिर से ऐसे दोष न करूँ, ऐसी आप मुझे शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए।'

'हे शुद्धात्मा भगवान! आप ऐसी कृपा करें कि हमारे भेदभाव छूट जाएँ और अभेद स्वरूप प्राप्त हो। मैं आप में अभेद स्वरूप से तन्मयाकार रहूँ।'

अब भगवान के साथ एकाकार हो गए कि हो गया सब अभेद। और उस तरह से अभेद होने के लिए यह सारा 'विज्ञान' है। पूरा जगत् भगवान को ढूँढ रहा है और वह अभेद होने के लिए ढूँढ रहा है।

- जय सच्चिदानंद

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में अडालज त्रिमंदिर में आगामी सत्संग कार्यक्रम

5-7 मार्च (शुक्र-रवि) - **पूज्य दीपकभाई के ज्ञानप्राप्ति के 50 वर्ष के अवसर पर विशेष कार्यक्रम**
19 मार्च (शुक्र) - **पूज्य नीरू माँ की 15वी पुण्यतिथि के अवसर पर** - सुबह 7 से 10 - प्रार्थना-विधि - पूज्य नीरू माँ पर आधारित स्पेशियल सी.डी. - किर्तन भक्ति, रात 8-30 से 10-30 - विशेष भक्ति कार्यक्रम
20 मार्च (शनि) शाम 6 से 8-30 - **सत्संग** तथा **21 मार्च** (रवि) शाम 5 से 8-30 - **ज्ञानविधि**

नोट : ज्ञानविधि के अलावा सभी कार्यक्रम ओनलाइन प्रसारित होंगे। सभी महात्माओं को सूचित किया जाता हैं कि ये सभी कार्यक्रम आप ओनलाइन देखें और अडालज न आएँ। जो मुमुक्षु आत्मज्ञान लेना चाहते है, उन्हें सूचित किया जाता हैं कि वे 9924348880 नंबर पर रजिस्ट्रेशन करवा कर उपरोक्त समय पर अडालज त्रिमंदिर पहुँचे। अधिक जानकारी Akonnect मोबाइल एप द्वारा दी जाएगी।

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई:** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा:** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687. **अन्य सेन्टरों के संपर्क : अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** (079) 27540408, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली:** 9810098564, **बैंगलूर:** 9590979099, **कोलकता:** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडा: +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

पूज्य नीरू माँ/पूज्य दीपक भाई को देखिए टी.वी. चैनल पर

भारत

- 'दूरदर्शन गिरनार' पर रोज सुबह 7-30 से 8-30 (फिर से शुरू)
- 'दूरदर्शन गिरनार' पर रोज रात 9 से 10 (फिर से शुरू)
- 'अरिहंत' चैनल पर रोज सुबह 2-50 से 3-50, दोपहर 2-30 से 3, रात 8 से 9
- 'वालम' पर रोज 6 से 6-30 (सिर्फ गुजरात राज्य में)
- 'दूरदर्शन उत्तरप्रदेश' पर रोज सुबह 7-30 से 8 (हिन्दी में) (फिर से शुरू)
- 'दूरदर्शन उत्तरप्रदेश' पर रोज सुबह 8-30 से 9-55 (हिन्दी में) (फिर से शुरू)
- 'साधना' पर रोज सुबह 7-50 से 8-15 तथा रात 9-30 से 9-55 (हिन्दी में)- नया कार्यक्रम
- 'उड़ीसा प्लस' टी.वी. पर रोज सुबह 7-30 से 8 (हिन्दी में-केवल उड़ीसा राज्य में)
- 'दूरदर्शन सह्याद्रि' पर रोज सुबह 7 से 7-30 (मराठी में) (फिर से शुरू)
- 'आस्था कन्नड़ा' पर रोज दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में) (नया)

USA - Canada

- 'TV Asia' पर रोज सुबह 7-30 से 8 EST
- 'Rishtey' पर रोज सुबह 7 से 7-30 और 8 से 8-30 EST (हिन्दी में)

U K

- 'वीनस' टी.वी. पर रोज सुबह 8 से 8-30 GMT (हिन्दी में)
- 'वीनस' टी.वी. पर रोज सुबह 8-30 से 9 GMT
- 'MA TV' पर रोज शाम 5-30 से 6-30 GMT
- 'Rishtey' पर रोज सुबह 7 से 7-30 Western European Time (6 to 6-30 am GMT)

Australia

- 'Rishtey' पर हर रोज सुबह 8 से 8-30 तथा दोपहर 1-30 से 2 (हिन्दी में)

Fiji - NZ - Singapore - SA - UAE

- 'Rishtey-Asia' पर हर रोज सुबह 6 से 6-30 तथा 7-30 से 8 (हिन्दी में)

USA - UK - Africa - Australia

- 'आस्था ग्लोबल' पर सोम से शुक्र रात 10 से 10-30 IST
  (डिश टी.वी. चैनल UK -849, USA-719) (गुजराती और हिन्दी में)

फरवरी 2021
वर्ष-16 अंक-4
अखंड क्रमांक - 184

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
LPWP Licence No. PMG/NG/036/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

शुद्धात्मा में उपयोग, व्यवहार में सभी तरह से हेल्पफुल होगा

मैंने आपको यह ज्ञान दिया है न, तो अब आप शुद्धात्मा हो गए। इसलिए अब ये मन-वचन-काया और 'चंदूभाई' के नाम की जो-जो माया है, वह सब 'व्यवस्थित' के ताबे में है। भीतर 'व्यवस्थित' प्रेरणा देगा। इसलिए आपको तो... 'मैं शुद्धात्मा हूँ', उसी में आप रहो। और आप देखते रहो कि इन 'चंदूभाई' का क्या हो रहा है, 'चंदूभाई' क्या कर रहे हैं। बस, इतना हो गया तो 'आप' पूर्ण हो जाओगे। दोनों अपने-अपने काम करते रहेंगे। 'चंदूभाई' 'चंदूभाई' का काम करेंगे। अब यदि शुद्धात्मा में उपयोग रहेगा तो वह सभी जगह पर हेल्प करेगा। खाने में, पीने में, व्यवसाय करने में, सभी में 'हेल्प' होगी। क्योंकि (प्रतिष्ठित)आत्मा इसमें और कुछ भी नहीं करता है, सिर्फ दखल ही करता रहता है।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Offset, B-99, GIDC, Sector-25, Gandhinagar - 382025.